

\* ॐ श्रीपरमात्मने नमः \*

# कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष  
१२

गीताप्रेस, गोरखपुर

बी.के.सिंह

संख्या  
११

भगवती श्रीलक्ष्मीजी





**COLLECTION OF VARIOUS**  
**-> HINDUISM SCRIPTURES**  
**-> HINDU COMICS**  
**-> AYURVEDA**  
**-> MAGZINES**

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

**Made with**  
  
**By**  
**Avinash/Shashi**

**Icreator of**  
**hinduism**  
**server!**





भगवान् श्रीरामकी स्तुति करते हनुमान्जी

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



# कल्याण

वन्दे वन्दनतुष्टमानसमतिप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्यैकवासं शिवम् ।  
सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मानुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम् ॥

वर्ष  
९२

गोरखपुर, सौर मार्गशीर्ष, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, नवम्बर २०१८ ई०

संख्या  
११

पूर्ण संख्या ११०४

## हनुमत्कृत श्रीरामस्तुति

नमो रामाय हरये विष्णवे प्रभविष्णवे । आदिदेवाय देवाय पुराणाय गदाभृते ॥  
विष्टरे पुष्पके नित्यं निविष्टाय महात्मने । प्रहृष्टवानरानीकजुष्टपादाम्बुजाय ते ॥  
निष्पिष्टराक्षसेन्द्राय जगदिष्टविधायिने । नमः सहस्रशिरसे सहस्रचरणाय च ॥  
सहस्राक्षाय शुद्धाय राघवाय च विष्णवे । भक्तार्तिहारिणे तुभ्यं सीतायाः पतये नमः ॥

[ श्रीहनुमान्जी बोले— ] सबपर शासन करनेवाले, सर्वव्यापी, श्रीहरिस्वरूप श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार है। आदिदेव पुराणपुरुष भगवान् गदाधरको नमस्कार है। (अष्टदल) कमलपर सिंहासनपर नित्य विराजमान होनेवाले महात्मा श्रीरघुनाथजीको नमस्कार है। प्रभो! हर्षमें भरे हुए वानरोंका समुदाय आपके युगल चरणारविन्दोंकी सेवा करता है, आपको नमस्कार है। राक्षसराज रावणको पीस डालकर सम्पूर्ण जगत्का अभीष्ट सिद्ध करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार है। आपके सहस्रों मस्तक, सहस्रों चरण और सहस्रों नेत्र हैं; आप विशुद्ध विष्णुस्वरूप राघवेन्द्रको नमस्कार है। आप भक्तोंकी पीड़ा दूर करनेवाले तथा सीताके प्राणवल्लभ हैं, आपको नमस्कार है। [ स्कन्दपुराण ]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,००,०००)

कल्याण, सौर मार्गशीर्ष, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, नवम्बर २०१८ ई०

## विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- हनुमकृत श्रीरामस्तुति.....	३	१४- विकासका भयावह पक्ष (श्रीगणेशदत्तजी दूबे).....	२७
२- कल्याण.....	५	१५- आत्मशान्ति—क्यों एवं कैसे? (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी).....	२९
३- भगवती श्रीलक्ष्मीजी [आवरणचित्र-परिचय].....	६	१६- संत-वचनमृत (वृन्दावनके गोलोकवासी संत पूज्य श्रीगणेशदास भक्तमालीजीके उपदेशपरक पत्रोंसे).....	३०
४- भगवान्की दया (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका).....	७	१७- रामकी शंकाका निवारण (डॉ० श्रीमती मीनाजी गुप्ता).....	३१
५- उद्यमका जादू.....	८	१८- भक्त नीलाम्बरदास [संत-चरित].....	३३
६- ज्ञान (श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज).....	९	१९- भगवद्गुण-महिमा.....	३६
७- तृष्णा (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)....	१०	२०- संत-संस्मरण (परमपूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार).....	३७
८- मोह रोगकी चिकित्सा (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय).....	१३	२१- ईश्वर और उनके अवतार (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज).....	३८
९- संसारसे निराशा, भगवान्की आशा [साधकोंके प्रति] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज).....	१७	२२- खेतीमें अमृतपानीका विशेष लाभ (वैद्य श्रीमती नन्दिनीजी भोजराज, एम०डी० (आयुर्वेद))....	४०
१०- 'अब, होउ राम अनुकूल' (प्रो० श्रीबालकृष्णजी कुमावत) ..	१९	२३- साधनोपयोगी पत्र.....	४२
११- योगवासिष्ठमें प्रारब्ध और पुरुषार्थ-विवेचन (श्रीरामकिशोरसिंहजी 'विरागी', एम०ए०, एल-एल०बी०).....	२२	२४- ब्रतोत्सव-पर्व [मार्गशीर्षमासके व्रतपर्व].....	४४
१२- उत्तम गृहवधू (परम पूज्य स्वामी श्रीगोविन्ददेवगिरिजी महाराज).२५		२५- ब्रतोत्सव-पर्व [पौषमासके व्रतपर्व].....	४५
१३- 'जो मोहि राम लागते मीठे' [कविता].....	२६	२६- कृपानुभूति.....	४६
		२७- पढ़ो, समझो और करो.....	४७
		२८- मनन करने योग्य.....	५०

## चित्र-सूची

१- भगवती श्रीलक्ष्मीजी..... (रंगीन).. आवरण-पृष्ठ	७- नारदजीद्वारा भगवान् विष्णुको शाप..... ( " ).....	१५
२- भगवान् श्रीरामकी स्तुति करते हनुमान्जी.. ( " )..... मुख-पृष्ठ	८- भगवान् विष्णुके चरणोंमें नारदजी..... ( " ).....	१६
३- भगवती श्रीलक्ष्मीजी..... (इकरंगा).....	९- भक्तपदानुसारी भगवान्..... ( " ).....	१८
४- तपस्या करते नारदजी..... ( " ).....	१०- भगवान् श्रीरामको उपदेश देते वसिष्ठजी.. ( " ).....	२२
५- विश्वमोहिनीके लक्षण बताते नारदजी... ( " ).....	११- सत्यभामा-द्रौपदी-संवाद..... ( " ).....	२६
६- स्वयंवर-सभामें नारदजी..... ( " ).....	१२- वाल्मीकि-श्रीराम-संवाद..... ( " ).....	३१

एकवर्षीय शुल्क

₹ २५०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥  
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥  
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail }  
शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 (₹ 3000)  
पंचवर्षीय US\$ 250 (₹ 15000)

{ Us Cheque Collection  
{ Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

₹ १२५०

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता-शुल्क—भुगतानहेतु- gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

## कल्याण

**याद रखो**—भगवान्की अनन्य शरणागति ऐसा महान् साधन है, जो मनुष्यको सारे पाप-तापोंसे मुक्त करके अनायास ही परम शान्तिका अधिकारी बना देता है। अतएव सारी आशाओं और सारे भरोसोंको छोड़कर एकमात्र प्रभुके शरण हो जाओ। फिर तुम्हें तुरन्त ही आत्यन्तिक और शाश्वती शान्ति मिल जायगी। ‘शिव’

**याद रखो**—जबतक तुम्हारा मन विषयोंमें भटकता रहेगा और भगवान्‌में नहीं लगेगा, तबतक तुम कभी शान्त और सखी नहीं हो सकोगे। पर भजनका अभ्यास

# भगवती श्रीलक्ष्मीजी



देवीकी जितनी भी शक्तियाँ मानी गयीं हैं, उन सबकी मूल भगवती लक्ष्मी ही हैं। ये भगवान् विष्णुकी पत्नी हैं। भगवती लक्ष्मी कमलवनमें निवास करती हैं, कमलपर बैठती हैं और हाथमें कमल ही धारण करती हैं। समस्त सम्पत्तियोंकी अधिष्ठात्री ये देवी शुद्ध सत्त्वमयी हैं। भगवान् जब-जब अवतार लेते हैं, तब-तब भगवती महालक्ष्मी भी अवतीर्ण होकर उनकी प्रत्येक लीलामें सहयोग देती हैं। इनके आविर्भावका इतिहास इस प्रकार है—

महर्षि भृगुकी पत्नी ख्यातिके गर्भसे एक त्रिलोकसुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई। वह समस्त शुभ लक्षणोंसे सुशोभित थी। इसलिये उसका नाम लक्ष्मी रखा गया। धीरे-धीरे बड़ी होनेपर लक्ष्मीने भगवान् नारायणके गुण-प्रभावका वर्णन सुना। इससे उनका हृदय भगवान्में अनुरक्त हो गया। वे भगवान् नारायणको पतिरूपमें प्राप्त करनेके लिये समुद्रतटपर घोर तपस्या करने लगीं। उन्हें तपस्या करते-करते हजार वर्ष बीत गये। उनकी परीक्षा लेनेके लिये देवराज इन्द्र भगवान् विष्णुका रूप धारण करके लक्ष्मी देवीके पास आये और उनसे वर माँगनेके लिये कहा—लक्ष्मीजीने उनसे विश्वरूपका दर्शन करानेके लिये कहा—

भगवती लक्ष्मीको कृतार्थ करनेके लिये स्वयं भगवान् विष्णु पधारे। भगवान्ने देवीसे वर माँगनेके लिये कहा। उनकी प्रार्थनापर भगवान्ने उन्हें विश्वरूपका दर्शन कराया। तदनन्तर लक्ष्मीजीकी इच्छानुसार भगवान् विष्णुने उन्हें पत्नीरूपमें स्वीकार किया।

लक्ष्मीजीके प्रकट होनेका दूसरा इतिहास इस प्रकार है—एक बार महर्षि दुर्वासा घूमते-घूमते एक मनोहर वनमें गये। वहाँ एक विद्याधरीने उन्हें दिव्य पुष्पोंकी एक माला भेंट की। माला लेकर उन्मत्त वेशधारी मुनिने उसे अपने मस्तकपर डाल लिया और पुनः पृथ्वीपर भ्रमण करने लगे। इसी समय दुर्वासाजीको देवराज इन्द्र दिखायी दिये। वे ऐरावतपर चढ़कर आ रहे थे। दुर्वासाने वह माला इन्द्रको दे दी। देवराज इन्द्रने उसे लेकर ऐरावतके मस्तकपर डाल दिया। ऐरावतने मालाकी तीव्र गन्धसे आकर्षित होकर उसे सूँड़से उतार लिया और पैरोंतले रौंद डाला। मालाकी दुर्दशा देखकर महर्षि दुर्वासा क्रोधसे जल उठे और उन्होंने इन्द्रको श्रीभ्रष्ट होनेका शाप दे दिया। उस शापके प्रभावसे इन्द्र श्रीभ्रष्ट हो गये और सम्पूर्ण देवलोकपर असुरोंका शासन हो गया। समस्त देवता असुरोंसे संत्रस्त होकर इधर-उधर भटकने लगे। ब्रह्माजीकी सलाहसे सभी देवता भगवान् विष्णुकी शरणमें गये। भगवान् विष्णुने उन लोगोंको असुरोंके साथ मिलकर क्षीरसागरको मथनेकी सलाह दी। भगवान्की आज्ञा पाकर देवगणोंने दैत्योंसे सन्धि करके अमृत-प्राप्तिके लिये समुद्र-मन्थनका कार्य आरम्भ किया।

मन्थन करनेपर क्षीरसागरसे क्रमशः कालकूट विष, कामधेनु, उच्चैश्रवा नामक अश्व, ऐरावत हाथी, कौस्तुभमणि, कल्पवृक्ष, अप्सराएँ, लक्ष्मी, वारुणी, चन्द्रमा, शंख, शार्ङ्ग धनुष, धनवन्तरि और अमृत प्रकट हुए। क्षीरसमुद्रसे जब भगवती लक्ष्मी देवी प्रकट हुई, तब वे खिले हुए श्वेत कमलके आसनपर विराजमान थीं। उनके श्रीअंगोंसे दिव्य कान्ति निकल रही थी। उनके हाथमें कमल था। लक्ष्मीजीका दर्शन करके देवता और महर्षिगण प्रसन्न हो गये। उन्होंने वैदिक श्रीसूक्तका पाठ करके लक्ष्मी देवीका स्तवन किया।



## भगवान्की दया

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

भगवान्की दयाके विषयमें कुछ चर्चा की जाती है। जब हम भगवान्की दयाकी ओर ध्यान देते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् दयाके सागर हैं। किंतु वस्तुतः ऐसा कहना भी स्तुतिमें निन्दा ही है; क्योंकि सागरकी तो एक सीमा होती है और भगवान्की दया सीमारहित है। हमलोगोंको दुनियामें दयाके नामसे जो चीज दिखायी देती है, वह सारी दुनियाकी दया मिलकर भी उस दयासागरकी एक बूँदके बराबर भी नहीं हो सकती; क्योंकि हमलोगोंमें जो दया है, यह तो एक सात्त्विक भाव है और भगवान्की दया चिन्मय होनेसे गुणोंसे अतीत है। संसारके सब लोगोंमें जो दया है, वह भगवान्की उस दयाके एक बिन्दुका आभासमात्र है—प्रतिबिम्बमात्र है, जैसे बिम्ब तथा प्रतिबिम्बका अन्तर है, इसी प्रकार भगवान्की दया और हमलोगोंकी दयाका अन्तर है। भगवान्की दया अपरिमित और अनन्त है। आकाशका भी कहीं अन्त आ सकता है, किंतु भगवान्की दयाका तो अन्त आता ही नहीं। जब मनुष्यको वास्तवमें इस बातका ज्ञान हो जाता है कि भगवान् ऐसे दयालु तथा प्रेमी हैं, तब वह प्रेम और दयाके तत्त्व-रहस्यको समझ जाता है और फिर वह समझनेवाला भक्त भी उसी समय सबका सुहृद् बन जाता है अर्थात् वह परम दयालु और परम प्रेमी बन जाता है। भगवान् परम प्रेमी और परम दयालु हैं, इस रहस्यको समझनेवाला प्रेमी भक्त प्रभुसे एक क्षण भी पृथक् नहीं रह सकता, प्रभुके बिना उसका जीवन भार हो जाता है। फिर भगवान्से मिले बिना उसके प्राण कैसे रह सकते हैं? क्योंकि वह यह समझता है कि 'भगवान् परम दयालु और परम प्रेमी हैं और वे सब जगह हैं तथा श्रद्धालु और प्रेमीको मिलते हैं और इतने भारी दयाके सागर हैं कि वे सदा सभीपर हेतुरहित दया और प्रेम रखते हैं।' तुलसीदासजीने भी कहा है—

आकर चारि लाख चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी॥

फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥

कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही॥

चार प्रकारकी चौरासी लाख योनियोंमें भ्रमण करते हुए जीवको दुःखित और आर्त देखकर बिना ही कारण दया और प्रेम करनेवाले भगवान् उसे मनुष्यका शरीर देते हैं। दयाके पात्र न होनेपर भी हमलोगोंपर भगवान्ने दया की, जिससे हमें यह मनुष्यशरीर मिला। यह मनुष्यका शरीर भगवान्ने इसीलिये दिया कि मनुष्य ही इस बातको समझ सकता है कि प्रभु बिना ही कारण दया और प्रेम करनेवाले हैं, किंतु यह बात समझमें नहीं आयी तो भगवान्का वह दया और प्रेमयुक्त परिश्रम सार्थक नहीं हुआ; अतः उसे सार्थक करना चाहिये।

हमलोग मनुष्य कहलाते हैं, अतः हममें मनुष्यत्व तो होना ही चाहिये। इतना उपकार करनेवाले भगवान्के प्रति हमें कृतघ्न तो नहीं होना चाहिये, उनके गुणोंको और उपकारोंको तो नहीं भुलाना चाहिये। भगवान् बिना ही कारण दया और प्रेम करनेवाले हैं, यह बात गीतामें भी कही है—

सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति।

(५।२९)

‘मैं सब प्राणियोंका सुहृद् हूँ, यह जानकर मनुष्यको शान्ति मिलती है।’ सुहृद्का अभिप्राय यह है कि भगवान् बिना ही कारण प्रेम और दया करनेवाले हैं। जब हमलोगोंको परम शान्ति नहीं मिली तो भगवान् सुहृद् हैं, इस बातको हमलोग कहाँ समझे? जो इस तत्त्वको समझ जाता है, उसको तो समझनेके साथ ही इतनी प्रसन्नता, इतनी शान्ति और इतना आनन्द होता है कि उसे अपने-आपका ही ज्ञान नहीं रहता। और फिर वह स्वयं सबका सुहृद् हो जाता है। भगवान्ने भक्तोंके लक्षण बतलाते हुए कहा है—

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।

(गीता १२।१३)

‘जो सारे भूतोंमें द्वेष-भावसे रहित है और सभी प्राणियोंपर हेतुरहित दया और प्रेम करनेवाला है, (वह



लड़का जब आतुर हो जाता है तो दयालु माँ उस लड़केको उठाकर हृदयसे लगा लेती है। भगवान्की दया तो माँकी अपेक्षा अनन्तगुणी अपार है। यह हमें मालूम हो जाय तो हमारी आतुरता इतनी बढ़ सकती है कि जबतक भगवान् हमें उठाकर हृदयसे न लगा लें, तबतक हमारा रोना बन्द ही न हो। भगवान् केवल हमारी आतुरता, श्रद्धा, प्रेम, भाव और व्याकुलता देखते हैं। इन बातोंको समझकर यदि हम भगवद्भावसे भावित हो जायँ तो फिर विलम्बका काम ही क्या है? जैसे बिजलीके तार आदि लगकर जब तैयार हो जाते हैं तब स्विच दबानेके साथ ही क्षणमात्रमें रोशनी हो जाती है, वैसे ही जब मनुष्य पात्र बन जाता है, तब भगवद्भावसे भावित होनेके साथ ही भगवान्की प्राप्ति हो जाती है।

यह कहकर न्यायाधीशने क्रेसिनको निर्दोष विदाई दी।

# ज्ञान

( श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज )

किसी भी वस्तुको जानना ‘ज्ञान’ कहा जाता है। जैसे ब्रह्मको पहचानना या अपनी आत्माको जानना ब्रह्मज्ञान या आत्माका ज्ञान कहा जाता है। आत्माको या सर्वव्यापक ब्रह्मको अपने अन्दर प्रत्यक्ष रूपसे पहचानना, निकटसे पहचानना, यही ब्रह्म (आत्मा)–का विज्ञान है।

ज्ञान तो किसी वस्तुके विषयमें सुनने या पढ़नेसे भी हो सकता है; परन्तु प्रत्यक्ष साक्षात्कारसे जो ज्ञान होता है, वह विज्ञान है। जैसे कि आसनपर स्थिर होकर मनको बाह्य विषयोंसे निवृत्त करके, पुनः सारे संसारकी तृष्णाका निरोध करनेपर मन जब जगत्को केवल इसलिये ही नहीं भूलता या छोड़ना चाहता कि यदि उसे भूलें, तो पुनः ज्ञानशून्य-सा होकर अपना आपा घोर अविद्याके अन्धकारमें पड़ा हुआ प्रतीत होता है। ज्ञानशून्य अवस्थामें मनका रमना दुष्कर है। या तो निद्रा ही आ जाय तब शान्त-अवस्थाकी अनुभूति चेतनमें होती है या पुनः संसारकी वस्तुओंके संस्कार जाग्रत् करके सांसारिक श्रवण, दर्शन इत्यादिके ज्ञानद्वारा अथवा वस्तुओंके चिन्तनद्वारा ज्ञानको पाकर अपने-आपमें रमण करे, परन्तु ज्ञानशून्य या ज्ञान ढका रहनेसे तो मनका स्मरण करना दुष्कर प्रतीत होता है।

ऐसी अवस्थामें प्रगाढ़ (गहरा) अविद्या-साम्राज्य होता है। यदि कोई उद्योगी साधक निद्राको जीतता हुआ और संसारिक विषयोंकी तृप्तिको क्षणिक और दुःखपूर्ण समझता हुआ ध्यानमें इनके चिन्तनके बिना स्थिर रहे और बाह्य चिन्तन त्यागनेसे जो दुःखकी अवस्था प्रकट होती है, उस दुःखमें मनको स्थिर रखकर साक्षी रूपसे देखता रहे, तो उसे इस ज्ञानशून्य-अवस्थाके टलनेका क्रमशः अनुभव अपने-आप ही हो जायगा। जब मन बाह्य चिन्तनसे शून्य होगा, तो ठीक है! ज्ञानशून्य अविद्याकी दशामें अरमण (मनके न लगनेकी दशा)- का शिकार हो जाता है और झट बाह्य जगत्के संस्कार ही जगाकर रमण करता है। परन्तु जो इस देहको जीवन-दान दे रहा है और सारे देहमें प्राण और रक्त-संचारकी शक्ति प्रदान कर रहा है, जिससे कि सब अंग अपने आपमें कार्य करते हुए दृष्टिमें आते हैं, वह कहीं शून्य

या नाशको प्राप्त नहीं हुआ। केवल अविद्याकी रात्रिसे ढका (आवृत्त) अवश्य है। बाह्य तृष्णाके संस्कारोंके कारण उसका मन्द-मन्द आनन्दयुक्त ज्ञान आविर्भूत नहीं हो रहा, यही कहा जाता है कि अविद्यासे आवृत्त (ढका) होता है। परन्तु विचारद्वारा निद्रा जीतनेपर, ध्यानमें प्रकट विवेकके जागनेपर, जब तृष्णाके सुखोंसे मन उपेक्षायुक्त (बेखबर) रहे और उस अनन्तमें सब जीवोंके समान रूपसे अपनी ज्ञान और क्रियाशक्तिके साथ बसे हुए अपने-आपको अपने-आपमें ही प्रकट होनेका अवकाश दे। यह बात नहीं कि वह जो निद्रामें अपना सुखरूप सबके लिये प्रकट करता है, परन्तु जाग्रत् ध्यानमें वह अपना सुख आनन्दस्वरूप प्रकट न करे। हाँ! धैर्यकी आवश्यकता है। अविद्याके तनावकी (ज्ञानशून्य) अवस्थाको टलने दे। ज्ञानशून्यताका दुःख क्षण-क्षण अनुभव करता हुआ जाग्रत् रहे। विषय-चिन्तन या बाह्य शब्दादि विषयोंको सुननेमें मनको न लगाये। सुननेपर भी उनकी उपेक्षा करता जाय और यह प्रतीक्षा भी न करे कि कब वह प्रकट आनन्दरूपसे साक्षात् अपने ज्ञानकी झलक दिखाता है। चिरकालके अभ्यासद्वारा सत्कारपूर्वक ज्ञानके साथ अपनेको जो संयममें रखकर एकान्तमें अभ्यास करेगा, उसे वह अपने-आप निरावृत्त (अविद्यासे रहित रूपसे) अपनी झाँकी दिखायेगा। यही सच्चा साक्षात्कार है। यही सत्यका ज्ञान परम महत्त्वका है। पुनः कालक्रम (साधन करते-करते समय बीतते रहने)-से यही सबमें समान रूपसे दीखने या अनुभवमें आनेपर, मनुष्यको बाह्य जगत्से पूर्ण रीतिसे मुक्ति मिल जायगी। पुनः संसारमें रमणका मन नहीं रहेगा। जैसे किसीको घरके कोनेमें मधु (शहद) मिल जाय, तो वह वनमें क्यों भटके? इसी प्रकार अपने-आपमें प्रत्येक अवस्थामें, वृद्धावस्थामें भी यदि आत्मज्ञानसे परमानन्द या सदा बसी रहनेवाली आनन्दकी अनुभूति और तृप्ति मिल जाय, तो दूसरोंकी दासता कोई क्यों करेगा? प्रत्युत दासतासे विमुक्तिका धन्यवाद ही करेगा। यही सच्चा ज्ञान है। [ प्रेषक—श्रीज्ञानचन्दजी गर्ग ]

अधिक दुःखदायिनी है। जो कभी घरसे बाहर नहीं  
 arma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shr  
 निकलता, तबना उसे भी संकटमें डाल देता है।



भीषयत्यपि धीरं मामन्धयत्यपि सेक्षणम्।

खेदयत्यपि सानन्दं तृष्णा कृष्णोव शर्वरी॥

(वही १७।१६)

‘तृष्णा महती अन्धकारमयी कालरात्रिकी तरह मुझ धीर पुरुषको भी डरा देती है। वह चक्षुयुक्तको भी अन्धा बना देती है और शान्तको भी खेदयुक्त कर देती है।’ विषय-तृष्णामें मतवाले मनुष्योंकी असफलतापर दुःख प्रकट करते हुए महाराज भर्तृहरि कहते हैं—

उत्खातं निधिशङ्कयक्षितितलं ध्माता गिरेर्धातवो  
निस्तीर्णः सरिताम्पतिर्नृपतयो यत्नेन संतोषिताः।

मन्त्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्मशाने क्षपाः  
प्रातः काणवराटकोऽपि न मया तृष्णोऽधुना मुञ्च माम्॥

(वैराग्यशतक ५)

धनकी तृष्णाने क्या-क्या काम नहीं कराये—

खोदत डोल्यो भूमि, गड़ीहु न पाई सम्पति।

धौकत रह्यो पखान, कनकके लोभ लगी मति॥

गयो सिन्धुके पास, तहाँ मुक्ताहु न पायो।

कौड़ी कर नहिं लगी, नृपनको शीश नवायो॥

साधे प्रयोग श्मशानमें, भूत प्रेत बैताल सजि।

कितहूँ भयो न वांछित कछू अब तो तृष्णा मोहि तजि॥

गड़े हुए धनकी प्राप्तिके लिये जमीनका तला खोद डाला, रसायनके लिये धातुएँ फूँकी, मोतियोंके लिये समुद्रकी थाह ली, राजाओंको सन्तुष्ट रखनेमें बड़ा यत्न किया, मन्त्रसिद्धिके लिये रातों श्मशान जगाया और एकाग्र होकर बैठा हुआ जप करता रहा, पर खेद है कि कहींपर भी एक फूटी कौड़ी हाथ न लगी। इसलिये हे तृष्णे! अब तो तू मेरा पिण्ड छोड़। फिर आगे कहते हैं—

भ्रान्तं देशमनेकदुर्गभवन्नं प्राप्तं न किञ्चित् फलं  
त्यक्त्वा जातिकुलाभिमानमुचितं सेवा कृता निष्फला।

भुक्तं मानविवर्जितं परगृहेष्वाशङ्कया काकवत्  
तृष्णो जृम्भसि पापकर्मनिरते नाद्यापि संतुष्यसि॥

(वैराग्यशतक ४)

भटक्यो देश-बिदेश, तहाँ कछू फलहु न पायो।

निज कुलको अभिमान छोड़ सेवा चित लायो॥

सही गारि अरु खीझ हाथ झारत घर आयो।

दूर करत हूँ दौरि, स्वान जिमि परघर खायो॥

इहि भाँति नचायो मोहि तैं, बहकायो दै लोभतल।

अबहुँ न तोहि सन्तोष कहु, तृष्णा तू पापिनि प्रबल॥

तृष्णासे ही इतनी लाज्जना, निर्लज्जता और इतन अपमान और दुःख सहन करना पड़ता है। एक दुःखके बाद नया दुःख आनेमें तृष्णा ही प्रधान कारण होती है। मनुष्य किसी भी अवस्थामें सन्तोष नहीं करता, इसीलिये बारम्बार उसकी स्थिति बदलती रहती है। तृष्णाके मारे भटकते-भटकते सारी उम्र बीत जाती है, अन्तमें वह जैसे-का-तैसा रह जाता है, पीछे हाथ मल-मलकर पछतानेसे भी कोई लाभ नहीं होता। यदि भाग्यवश धन प्राप्त भी हो जाता है, तब भी वह तृष्णा उसका कुछ विशेष सदुपयोग नहीं होने देती, सारी आयु बातोंमें ही बीत जाती है।

अतएव बुद्धिमान् मनुष्योंको भोगोंकी तृष्णासे मुँह मोड़कर परमात्माके लिये तृषित होना चाहिये। भोगोंसे कभी तृप्ति नहीं होती—‘**बुद्धि न काम अग्नि तुलसी कहूँ, विषय-भोग बहु घी ते॥**’ (विनय-पत्रिका) अग्निमें घी डालते जाइये, वह और भी धधकेगी। यही दशा कामनाकी है। उसे बुझाना हो तो सन्तोषरूपी शीतल जल डालिये। धन तो वही असली है, जिससे मनुष्यको सुख मिलता है। ऐसा धन सन्तोष है—‘**सन्तोषः परमं धनम्।**’ ऐसे अनेक करोड़पति देखे जाते हैं, जो तृष्णाके फेरमें पड़े हुए असन्तोष और अतृप्तिकी तीव्र आगसे जल रहे हैं। उनके अन्तःकरणमें क्षणभरके लिये भी शान्ति पैदा नहीं होती। इसलिये तो वे महान् दुखी रहते हैं—

अशान्तस्य कुतः सुखम्।

न्यायसे धन कमाने और उसका सदुपयोग करनेकी मनाही नहीं है, परंतु धनकी तृष्णासे मतवाले होनेकी आवश्यकता नहीं। इसीलिये शास्त्रोंमें इसके लिये मर्यादा बतायी है; क्योंकि धनमें बड़ी मादकता होती है, ‘धनमद’ सबसे बड़ा मद होता है। यह मद जब

तस्य कार्यं न विद्यते।





शुद्धि के लिये प्रार्थना की। वह अपने हृदय में विचार कर रहा था कि मैंने जो कुछ किया है, वह इन्द्रके कहनेसे किया है।' कामके कथनका अर्थ यही है कि यदि दण्ड देना हो तो इन्द्रको दीजियेगा, मुझे नहीं। यही व्यक्तिके जीवनकी विडम्बना है कि अभीतक तो काम इन्द्रका सहयोगी बना हुआ था, और जब अपने उद्यममें असफल हो गया, तब कहता है मैंने यह अपनी इच्छासे नहीं किया है। फिर भी नारदको क्रोध नहीं आया और उन्होंने मुसकराकर कामसे कहा—'तुम इन्द्रसे जाकर कह देना कि मेरे अन्तःकरणमें स्वर्गका कोई लोभ नहीं है, वह आनन्दसे स्वर्गके भोगोंका भोग करे।' काम नारदके चरणोंमें प्रणाम करके चला गया। लेकिन एक विचित्र बात हो गयी। अभी नारदके जीवनमें सद्विचारोंकी—सत्कर्मोंकी साधनाकी इतनी बढ़िया खेती हुई थी, पर अब उसके बगलमें अहंकारकी घास उग आयी और नारद उस घासको अनदेखा कर देते हैं, घासकी पहचान नहीं कर पाते हैं। यही नारदकी समस्या है। रोग कब होता है, जब रोगी कुपथ्य करता है। नारदने सारी इन्द्रियोंसे तो कुपथ्य रोक दिया, पर एक इन्द्रियसे कुपथ्य हो गया।

भगवान् नारदके इस अहंकारके आधारको ही नष्ट कर देना चाहते हैं। इसे प्रत्यक्ष करानेके लिये भगवान्ने एक कौतुक किया। भगवान्ने अपनी मायाको प्रेरित किया। भगवान्की वह माया वैकुण्ठसे भी अधिक सुन्दर विचित्र नगरकी सृष्टि करती है। नारदको वह नगर बड़ा आकर्षक प्रतीत होता है और वे उसे देखनेके लिये आगे बढ़ जाते हैं। नगरके राजा शीलनिधिने आकर उन्हें प्रणाम किया और अपनी कन्याको बुलवाया। कन्याका नाम है विश्वमोहिनी। राजा नारदजीसे कहते हैं—'हे नाथ!

कहिये।' कन्या अति सुन्दर थी। नारदजी उसपर



मोहित हो गये। नारदजीने उसके साथ विवाह करनेकी योजना बनायी। उसके पश्चात् नारदजीके जीवनमें सारे दुर्गुण काम, क्रोध, लोभ, मद और मात्सर्य दिखायी देने लगे।

भगवान्ने मानो बता दिया कि नारद! तुम वृथा गर्व कर रहे हो कि तुमने कामको जीत लिया। देखो, तुम तो काममें इतने पागल हो रहे हो, जितना एक गृहस्थ भी नहीं होता। गृहस्थ कामी भी बनता है तो सुबह उठकर पूजा-पाठ तो कर ही लेता है, पर नारदकी दशा ऐसी हो गयी है कि कहते हैं—

जप तप कछु न होइ तेहि काला।

हे बिधि मिलइ कवन बिधि बाला॥

इस समय जप-तपसे तो कुछ हो नहीं सकता, इस समय तो सुन्दर रूपकी आवश्यकता है, जिसे देखकर राजकुमारी मुझपर रीझ जाय और मेरे गलेमें वरमाला डाल दे। उस समय नारदजीने भगवान्से प्रार्थना की कि प्रभो! आप अपना रूप मुझे दे दीजिये, और किसी प्रकारसे मैं उस राजकन्याको नहीं पा सकता। उन्होंने भगवान्से प्रार्थना की—

नारदको बड़ा गर्व था कि मुझे इन्द्र और कामपर क्रोध नहीं आया। पर भगवान् ने उन्हें दिखा दिया कि तुम कितने गर्वीले हो। अरे! तुम तो मुझपर क्रोध कर रहे हो, मुझे गाली दे रहे हो, मुझे शाप दे रहे हो। तुम्हारा सारा अभिमान व्यर्थ है। नारद जब इस सत्यको समझ लेते हैं, भगवान् उनके

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

अलग-अलग विकारोंको दूर करनेके बदले विकारोंके मूलमें जो मोहकी वृत्ति विद्यमान है, उसीको दूर कर देते हैं—

जब हरि माया दूरि निवारी । नहिं तहँ रमा न राजकुमारी ॥

और जब विश्वमोहिनी नहीं रही—

जबतक माया थी, तबतक भगवान्‌से झगड़ रहे थे।

जब मायाका लोप हो गया, मोह दूर हो गया, तो



भगवान्‌के चरणोंमें गिर पड़े और कहने लगे—

‘मृषा होउ मम श्राप कृपाला।’ मैं दुर्बचन कहे  
बहुतरे। कह मुनि पाप मिटिहिं किमि मेरे’॥

महाराज ! मेरा पाप कैसे मिटे, यह बताइये। मुझसे जो दोष हुआ है, उसका प्रायश्चित्त क्या है ? भगवान् ने मुसकराकर कहा— *‘जपहु जाइ संकर सत नामा।’*

विष्णुभगवान् अति विशेष कृपा करके जब नारदजीके सामनेसे अपनी मायाका लोप कर देते हैं, तभी नारदजीका मोह नष्ट होता है। मोहके कारण ही नारदजी अन्य दुर्गुणोंरूपी रोगसे ग्रस्त हो गये थे। हमारे जीवनमें भी जितने दुर्गुण हैं, सब भगवान्की मायाके कारण ही हैं।

माया छायाके जैसी है। छाया दिखती है, छायाको कोई पकड़ नहीं सकता। जो दीपके सम्मुख है, उसको छाया नहीं दिखती—उसके पीछे छाया रहती है। जो दीपकके सामने पीठ करता है, तब छाया आती है। जो

भगवान्‌के सम्मुख है, माया उसे नहीं दिखती है।  
भगवान्‌को भूल जाय यही बड़ा पाप है।

सबसे बड़ा पाप कौन-सा है। शास्त्रोंमें लिखा है—ब्रह्महत्या महापाप है। ब्रह्मको मारनेमें ‘ब्रह्म हत्या’ होती है—अरे, ब्रह्मको कौन मार सकता है ? ब्रह्महत्याका अर्थ है—ब्रह्म-विस्मरण। जो भगवान्‌को भूल जाता है, उसके आगे माया आती है। भगवान्‌को भूलना नहीं।

नारदजी विष्णुभगवान्से पूछते हैं—‘महाराज ! मेरा पाप कैसे मिटे, यह बताइये ? मुझसे जो पाप हुआ है उसका प्रायश्चित्त क्या है ?’ भगवान् बताते हैं कि तुम भगवान् शंकरके नामका जप करो। वैसे पाप छोड़ना बड़ा ही कठिन है। पाप प्रायः सभी लोग करते हैं। भगवान्के नामका जप करनेसे ही पाप छूटता है। भगवान् हृदयमें प्रकट हों और जिसको पाप करनेसे ही रोक लें, उसीका पाप छूटता है। हनुमान्जीने कभी पाप किया ही नहीं। इसका एक ही कारण है—‘श्रीहनुमान्जी महाराज सतत रामनामका जप करते हैं।’

जपसे ही जीवन सुधरता है। आप बहुत दान दो, उससे बिगड़ा हुआ मन शुद्ध नहीं होगा। दान देनेसे पुण्य बढ़ता है। यज्ञ करनेसे, तीर्थयात्रा करनेसे पुण्य बढ़ेगा। पुण्य बढ़ता है, तब पुण्यका अभिमान बढ़ता है। किंतु किये हुए पाप नष्ट नहीं होते। लोग दान देते हैं, यज्ञ करते हैं नाना प्रकारके पुण्य करते हैं। अच्छा है। सबसे उत्तम तो यह है कि घरमें शान्तिसे बैठकर भगवान्‌के नामका जप करो। भगवान्‌को भूलो नहीं।

गोस्वामीजी इस प्रसंगका नाम 'नारद-मोह' देते हैं। यह सार्थक नाम है। इसका तात्पर्य यह है कि दुर्गुणोंके बीज व्यक्तिके अन्तःकरणमें विद्यमान रहते हैं, और समय पाकर वे अंकुरित हो उठते हैं। रामायणमें यह दावा किया गया है कि बड़े-से-बड़ा व्यक्ति भी इसका अपवाद नहीं है, ऐसा कोई नहीं, जो कह सके कि उसके अन्तःकरणमें दुर्गुणोंके संस्कार नहीं हैं। यदि कोई ऐसा कहता है, तो वह अपने जाने हुए सत्यका तिरस्कार करता है और फलस्वरूप मन तथा शरीरकी दृष्टिसे अस्वस्थ हो उठता है।

[ प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता ]



साधकोंके प्रति—

## संसारसे निराशा, भगवान्की आशा

( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज )

आस्तिक लोग इस बातको दृढ़तापूर्वक मानते हैं कि परमात्मा सभी देश, काल एवं वस्तुओंमें परिपूर्ण हैं, व्याप्त हैं। ऐसी कोई जगह नहीं है, जहाँपर वे न हों। वे सभी देशमें हैं, अतः जहाँपर आप हैं, वहाँपर भी हैं, वे सभी समयमें हैं, अतः अब भी हैं, एवं सभी वस्तुओं-व्यक्तियोंमें हैं, अतः आपमें भी हैं। इस मान्यतामें किसी प्रकारका कोई सन्देह नहीं हो सकता है। सभी वेद, पुराण, संत, महात्मा इसका पूरी तरहसे समर्थन करते हैं। वे परमात्मा सभी काल एवं अवस्थाओंमें हैं—ज्यों-के-त्यों हैं, उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता है।

जो संसार हमारे देखने, सुनने एवं समझनेमें आता है, वह सब-का-सब परिवर्तनशील है। यह एक क्षण भी स्थिर नहीं रहता, बदलता ही रहता है। यदि आज हम अपने बचपनके रूपको देखना चाहें तो नहीं देख सकते; क्योंकि वह रूप सर्वथा बदल गया है। इसी प्रकार यह वर्तमान रूप भी नहीं रहेगा, इसमें भी परिवर्तन हो रहा है। अन्य जितने भी प्राकृतिक पदार्थ हैं, वे भी हर क्षण बदल रहे हैं। दृश्यमात्र प्रतिक्षण अदृश्यताको प्राप्त हो रहा है। यदि हम गम्भीरतासे विचार करें तो प्रतीत होगा कि इनमें केवल नाश ही नाश है, नाशके अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु ही नहीं है। अतः बुद्धिमत्ता इसीमें है कि नाशवान्, परिवर्तनशील संसारका आश्रय न लेकर सर्वत्र परिपूर्ण परमात्माका ही आश्रय लें; क्योंकि जो प्रतिक्षण बह रहा है, नाशको प्राप्त हो रहा है, उसके आश्रयसे कौन-सा लाभ प्राप्त हो सकता है?

प्रतिक्षण बदलनेवाला एवं बहनेवाला संसार हमारा नहीं है, किंतु प्रत्येक अवस्थामें सम रहनेवाले परमात्मा हमारे हैं। संसार एवं शरीर एक जातिके हैं तथा परमात्मा एवं हम एक जातिके हैं। संसार-शरीर प्रकृतिके अंश हैं तथा हम परमात्माके अंश हैं। अंश अंशीको ही प्राप्त होना चाहिये। संसार एवं सांसारिक पदार्थ

शरीरतक ही जा सकते हैं, हमतक नहीं। पर हमको तो परमात्मा प्राप्त हो ही सकते हैं। वे परमात्मा सभी प्राणियोंके सुहृद् हैं एवं उन्होंने सभीको अपन आश्रय प्रदान कर रखा है। केवल इसे स्वीकार करनेकी उत्कट इच्छा होनी चाहिये। यह इच्छा पहले हमको अर्थात् जीवको ही करनी पड़ेगी; क्योंकि जीव ही परमात्मासे विमुख हुआ है, परमात्मा तो कभी दूर हुए ही नहीं।

परिवर्तनशील एवं नाशवान्का सदुपयोग किया जा सकता है, भरोसा नहीं। जो एक क्षण भी स्थिर नहीं टिकता, उसपर कैसे विश्वास किया जाय? परमात्मा भूतकालमें थे, वर्तमानमें हैं एवं भविष्यमें भी रहेंगे ही, अतः उन्हींको अपना आधार मानकर स्वयंको उनकी सेवामें समर्पित कर देना चाहिये। हाँ शरीर संसारका है, अतः इसे संसारकी सेवामें लगा देना चाहिये।

स्वयंको परमात्माकी सेवामें अर्पित कर देनेसे साधक कृतकृत्य, प्राप्त-प्राप्तव्य एवं ज्ञात-ज्ञातव्य हो जाता है। फिर उसे कुछ भी करना, पाना एवं जानना शेष नहीं रहता। किंतु संसारकी आशा रखनेसे सिवा धोखे एवं विश्वासघातके और कुछ भी हाथ नहीं लगता। प्रत्येक व्यक्तिका आजतकका अनुभव यही बतलाता है। इतने वर्ष हो गये संसारका आश्रय लेते हुए, पर इससे कौन-सी प्राप्ति हुई? लेनेकी इच्छासे जहाँपर भी हाथ डाला, वहीं दुःख, निराशा एवं अभाव ही हाथ लगे। वस्तुतः संसार सभी दृष्टि-कोणोंसे अपूर्ण है। अपूर्णसे पूर्णताकी प्राप्ति कैसे हो सकती है?

संसारमें धन-सम्पत्ति, पद-अधिकार एवं मान-बड़ाई प्राप्त करनेकी इच्छा करना एक बहुत बड़ा प्रमाद एवं बहुत बड़ी भूल है। गम्भीरतासे सोचना चाहिये कि क्या ये चीजें रहेंगी? जो पहले नहीं थीं, वे आगे भी नहीं रहेंगी—उनकी प्राप्तिसे क्या हम

A black and white illustration of Radha and Krishna in a forest. Radha, on the left, is dressed in a white sari with a striped shawl and a necklace, holding a small object in her right hand. Krishna, on the right, is dressed in a dhoti and a shawl, holding a flute. They are standing on a path with trees in the background.

Hinduism Discord Server <https://discord.gg/dharma> MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

## ‘अब, होउ राम अनुकूला’

( प्रो० श्रीबालकृष्णजी कुमावत )

हिन्दी साहित्यके मूर्धन्य विद्वान् आचार्य रामचन्द्र शुक्लने लिखा है—‘भक्ति-रसका पूर्ण परिपाक जैसा विनय-पत्रिकामें देखा जाता है, वैसा अन्यत्र नहीं।’ भक्तिमें प्रेमके अतिरिक्त आलम्बन और अपने दैन्यका अनुभव परमावश्यक अंग है। तुलसीके हृदयसे इन दोनों अनुभवोंके ऐसे निर्मल शब्द-स्रोत निकले हैं, जिनमें अवगाहन करनेसे मनकी मैल कटती है और अत्यन्त पवित्र प्रफुल्लता आती है। प्रत्येक ग्रन्थकी रचनाका कुछ-न-कुछ प्रयोजन होता है। इस ग्रन्थके नामसे तो यही प्रतीत होता है कि गोस्वामी तुलसीदासजीने अपना दुःख निवेदन करनेके लिये श्रीराघवेन्द्रसरकारको यह आपबीती पत्रिका लिखी है। सामने न पहुँच सकनेके कारण यह चिट्ठी दरबारमें दूसरोंसे पेश करायी है। दुःख देनेवाला कलिदेव था। जब कलिके मारे गोसाईंजीके नाकों दम आ गया, तब उन्हें राघवेन्द्रसरकारके दरबारमें पत्रिका भेजनी पड़ी। २७६ पदतक पत्रिका लिखी गयी है। पत्रिका पूरी हो चुकी तो प्रश्न उठा—इसे पेश कैसे करें? फिर हनुमान्जी, शत्रुघ्नजी, लक्ष्मणजी और भरतजीसे प्रार्थना की गयी। सेवक बननेका किसीको साहस न हुआ। सभी एक-दूसरेके मुँहकी ओर ताकने लगे। परंतु लक्ष्मणजी सबमें दृढ़ थे। उनपर राघवेन्द्रसरकारका अपरिमित वात्सल्य-प्रेम था। उन्होंने ही पत्रिका पेश की। ग्रन्थ यहीं समाप्त होता है। श्रीहनुमान्जी और भरतजीकी रुचि देखकर लक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीसे कहा—‘हे नाथ! कलियुगमें भी आपके एक सेवककी आपके नामसे प्रीति और प्रतीति निभ गयी।’ देखिये, उसकी यह ‘विनय-पत्रिका’ भी आयी है। यह सुनकर सारी राजसभा एक स्वरसे कह उठी, हाँ यह सच है, लोग भी उसकी रीतिको जानते हैं। गरीबनवाज श्रीरामचन्द्रजीकी उसपर भारी कृपा है। स्वामीने सबके देखते-देखते उसकी बाँह पकड़कर अपना लिया है। सबकी बात सुनकर श्रीरघुनाथजीने मुसकराकर कहा—‘हाँ, यह सत्य है। मुझे भी उसकी खबर मिल गयी है।’

गोस्वामीजीने पद-क्रमांक ४१में श्रीसीताजीकी स्तुतिमें कहा है, ‘कबहुँक अंब अवसर पाइ। मेरिओ सुधि द्याइबी, कछु करुन-कथा चलाइ॥’ निश्चित ही श्रीजनकनन्दिनीजीने श्रीरघुनाथजीसे चर्चा चलायी होगी। बस, फिर क्या, अनाथ तुलसीकी रची ‘विनय-पत्रिका’ पर श्रीरघुनाथजी ने ‘सही’ कर दी।

वस्तुतः गोस्वामीजी भी यही चाहते थे कि श्रीराघवेन्द्रसरकार पहले इस ‘विनय-पत्रिका’ पर अपनी ‘सही’ कर दें। फिर पीछे पंचोंसे भले ही पूछ लें। यदि पहले ही पंचोंसे सलाह ली तो शायद वे यह कह दें कि ‘पत्रिका’ का मजमून बिगड़ गया है, यह राजदरबारके योग्य नहीं है, तो मेरा सारा किया-कराया मिट्टीमें मिल जायगा। यथा—

‘बिनय-पत्रिका’ दीन की, बापू! आप ही बाँचो।

हिये हेर तुलसी लिखी, सो सुभाय सही करि बहुरि पूँछिये पाँचो॥

( २७७। ३ )

सुप्रसिद्ध टीकाकार भक्तवर श्रीबैजनाथजीने विनयकी सात भूमिकाएँ मानी हैं, जिनके अन्तर्गत प्रायः विनय-सम्बन्धी सभी प्रकारके पद आ जाते हैं—

१. दीनता—कैसे देऊँ नाथहिं खोरि। (पद १५८)
२. मानमर्षता—काहे ते हरि मोहिं बिसार्यो। (पद ९४)
३. भयदर्शना—राम कहत चलु। (पद १८९)
४. भर्त्सना—ऐसी मूढ़ता या मनकी। (पद ९०)
५. आश्वासन—ऐसे राम दीन-हितकारी। (पद १६६)
६. मनोराज्य—कबहुँक हों यहि रहनि रहौंगो। (पद १७२)
७. विचारणा—केसव! कहि न जाइ का कहिये। (पद १११)

इस प्रकार किसी पदमें स्वामीका प्रभुत्व तो किसीमें सौहार्द और किसीमें औदार्य एवं शीलकी अभिव्यक्ति है। किसी पदमें जीवका असामर्थ्य, किसीमें आत्मग्लानि

जन्म-मरणका चक्र सदा चलता ही रहेगा। हाँ,

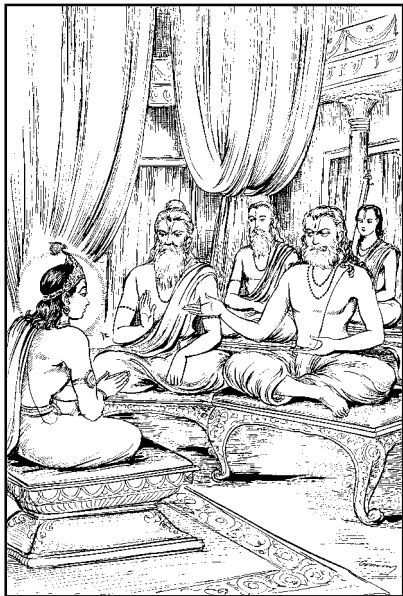




## योगवासिष्ठमें प्रारब्ध और पुरुषार्थ-विवेचन

( श्रीरामकिशोरसिंहजी 'विरागी', एम०ए०, एल-एल०बी० )

महर्षि वसिष्ठ युवराज श्रीरामसे प्रारब्ध और



पुरुषार्थका विवेचन करते हुए कहते हैं—श्रीराम! शुभ फल (परिणाम) की कामना अपने जीवनमें हर कोई करता है या करता रहता है। परंतु इस शुभ फलका शुभागमन जीवनमें तभी होता है या होता रहता है, जब जीवनमें शुभ कर्म या कर्मोंका नित्य-निरन्तर संपादन होता रहे; क्योंकि जीवनमें अपने द्वारा किये गये या किये जा रहे कर्म या कर्मोंका ही फल (परिणाम) आता रहता है। कर्मफलका सिद्धान्त जीवनके साथ संलग्न है। हर छोटे-बड़े कर्मोंका फल ही जीवनमें आता है। कर्मफलके अतिरिक्त और किसी भी चीजका फल जीवनमें नहीं आता है। कर्मफलका सिद्धान्त अकाट्य, निश्चित और अवश्यम्भावी है।

अब जहाँतक सवाल है कि शुभ फल तो हर कोई अपने जीवनमें चाहता है। शुभ फलकी कामना हर किसीके मन और अन्तःकरणमें विद्यमान है या होती है। परन्तु शुभफलके लिये जो शुभ कर्म अपने द्वारा सम्पन्न होना चाहिये या होते जाना चाहिये, लोग उसका ध्यान नहीं रख पाते हैं। शुभ कर्मोंसे विमुख होकर शुभ

फलकी प्राप्ति नहीं हो सकती है। शुभ कर्मोंमें संलग्न रहकर ही शुभ फलको प्राप्त किया जा सकता है। अतः शुभ कर्ममें सदैव संलग्न रहना ही हमारे ध्यान, चिन्तन और स्मरणमें रहना चाहिये। महर्षि वसिष्ठका भी यही कहना है—‘इस संसारमें सदा अच्छी तरह पुरुषार्थ (प्रयत्न) करनेसे सबको सब कुछ मिल जाता है। जहाँ कहीं किसीको असफल देखा जाता है, वहाँ उसके सम्यक् प्रयत्नका अभाव ही कारण है।’

‘उससे भिन्न जो शास्त्र-विपरीत मनमाना आचरण है, वह पागलों-सी चेष्टा है। जो मनुष्य जिस पदार्थको पाना चाहता है, उसकी प्राप्तिके लिये यदि वह क्रमशः यत्न करता है और बीचमें ही उससे मुँह नहीं मोड़ लेता तो अवश्य उसे प्राप्त कर लेता है।’

‘श्रुति-स्मृति आदि शास्त्रसे नियन्त्रित पुरुषार्थके सम्पादनमें तत्पर जो पुरुषका पौरुष (उद्योग) है, वही मनोवांछित फलकी सिद्धिका कारण होता है। शास्त्रके विपरीत किया हुआ प्रयत्न अनर्थकी ही प्राप्ति करानेवाला होता है। कोई पुरुष जब शास्त्रीय प्रयत्नको शिथिल कर देता है, तब स्वयं दरिद्रता, रोग और बन्धन आदि अपनी दुर्दशाके कारण वह ऐसी अवस्थामें पहुँच जाता है, जहाँ उसके लिये पानीकी एक बूँद भी बहुत समझी जाती है।’ (योगवासिष्ठ-मुमुक्षुव्यवहार प्रकरणः सर्ग-३-४)

इसके बाद देखा जाता है कि शुभ कर्म करते रहनेके बाद भी मनोवांछित फल (परिणाम) जीवनमें नहीं आने पाता है। तब कर्ता (करनेवाला) निराश और हताश हो जाता है और सोचने लगता है कि जो दैव (प्रारब्ध) में लिखा है, वही होगा। कितना भी अच्छा करेंगे तो परिणाम विपरीत ही होगा; क्योंकि यह फल दैव (प्रारब्ध) के अनुसार ही मिलता है या आता है। तब ऐसा सोच-सोच करके कर्ता उदास हो जाता है और फलकी प्राप्ति भी उदास हो जाता है। फिर जैसे-तैसे

कर्मोंमें वह अपना समय व्यतीत करने लगता है। अन्यमनस्क ढंगसे अपनी शान्ति और ऊर्जा नष्ट करने लगता है। कोई इस मनोवृत्तिके कारण अपने जीवनको दुर्गतिमें डाल देता है। महर्षि वसिष्ठ इस मनोवृत्ति और मानसिक समस्याका समाधान करते हुए कहते हैं—

‘यह पूर्वजन्मका पुरुषार्थ (प्रारब्ध) मुझे प्रेरित करके विशेष परिस्थितिमें डाल देता है, इस प्रकारकी बुद्धिको बलपूर्वक कुचल डालना चाहिये; क्योंकि वह प्रत्यक्ष प्रयत्नसे अधिक प्रबल नहीं है। तबतक प्रयत्नपूर्वक उत्तम पुरुषार्थके लिये सचेष्ट रहना चाहिये; जबतक कि पूर्वजन्मका अशुभ पौरुष स्वयं पूर्णतः शान्त न हो जाय। अर्थात् जबतक पहले जन्मोंका किया हुआ अशुभ कर्म समूल नष्ट न हो जाय, तबतक तत्परतासे उत्साहपूर्वक साधन करते रहना चाहिये।’

‘जैसे अपने द्वारा कल घटित हुए दोषका आज प्रायश्चित्त कर लेनेपर नाश हो जाता है, उसी प्रकार इस जन्मके गुणों (शुभ पौरुष) से पूर्वजन्मका दोष (अशुभ पौरुष) अवश्य नष्ट हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है। पूर्वजन्मके अशुभ या दुःखदायक प्रारब्धको इस जन्मके शुभ कर्मोंसे विशुद्ध एवं पुष्ट हुई बुद्धिके द्वारा तिरस्कृत करके संसार-सागरसे पार होनेके उद्देश्यकी सिद्धिके लिये अपने भीतर दैवीसम्पत्तिके संग्रहके निमित्त सदा यत्न करना चाहिये। उद्योगशून्य आलसी मनुष्य गदहोंके समान गये-बीते हैं। अतः स्वयं भी उद्योग छोड़कर उन्हींकी श्रेणी या तुलनामें नहीं जाना चाहिये। शास्त्रके अनुसार किया हुआ उद्योग इहलोक और परलोक दोनोंकी सिद्धिमें कारण है। मनुष्यको पुरुषार्थरूपी प्रयत्नका आश्रय लेकर इस संसाररूपी गड्ढेसे बलपूर्वक निकल जाना चाहिये।’ (योगवासिष्ठ-मुमुक्षुप्रकरणः सर्ग-५)

महर्षि वसिष्ठ हर प्रतिकूल और विपरीत दशामें शुभकर्म (पुरुषार्थ) की ओर प्रेरित करते हैं; क्योंकि विपरीत फल (परिणाम) अपने लिये पौरुष या पुरुषार्थका परिणाम है जिसे सामने पाकर घबड़ाये नहीं, उदास और

निराश न हो, हताश न हो, बल्कि नये ढंग, नये उत्साह और नवीनतम प्रेरणाको ग्रहण करते हुए शुभ कर्ममें लग जाना चाहिये और लगा रहना चाहिये। महर्षि वसिष्ठ कर्त्ताको कर्मकी प्रेरणा देते हुए कहते हैं—

‘पूर्वजन्मके तथा इस जन्मके पुरुषार्थ (कर्म) दो भेदोंकी तरह आपसमें लड़ते हैं। उनमें जो भी बलवान् होता है, वही दूसरेको क्षणभरमें पछाड़ देता है। इस जन्ममें किया प्रबल पुरुषार्थ अपने बलसे पूर्वजन्मके पौरुष या दैवको नष्ट कर देता है और पूर्वजन्मका प्रबल पौरुष इस जन्मके पुरुषार्थको अपने बलसे दबा देता है। पूर्वकृत कर्मोंके फलस्वरूप प्रारब्ध और वर्तमान जन्मके पुरुषार्थ—इन दोनोंमें वर्तमान जन्मका पुरुषार्थ ही प्रत्यक्षतः बलवान् है, इसलिये अधिकारी मनुष्यको पुरुषार्थका सहारा लेकर सत्-शास्त्रोंके अभ्यास और सत्संगद्वारा बुद्धिको निर्मल बनाकर संसार-सागरसे अपना उद्धार कर लेना चाहिये। इस जन्मके और पूर्वजन्मके दोनों पुरुषार्थ पुरुषरूपी वनमें उत्पन्न फल देनेवाले वृक्ष हैं। उन दोनोंमें जो अधिक बलवान् होता है, वही विजयी होता है अर्थात् धर्माचरण और मुक्तिके विषयमें तो इस जन्मका पुरुषार्थ बलवान् है और अर्थ एवं कामके विषयमें पूर्वजन्मका फलदानोन्मुख कर्म या दैव प्रबल है।’

इस विषयको इस प्रकार समझा जा सकता है— जैसे पूर्वजन्मके किसी प्रतिबन्धक कर्मके कारण किसी मनुष्यको पुत्रकी प्राप्ति नहीं होनेवाली है; परंतु यदि वह पुत्र-प्राप्तिके लिये शास्त्रीय विधानके साथ पुत्रेष्टि-यज्ञ अथवा उसी कोटिके दूसरे किसी सत्कर्मका अनुष्ठान करता है तो उसे पुत्रकी प्राप्ति हो जाती है। यहाँ पूर्वजन्मके प्रतिबन्धक कर्मसे इस जन्मका पुरुषार्थ अधिक बलवान् होनेके कारण नवीन प्रारब्धका निर्माण करके विजयी हो जाता है। इसी प्रकार पूर्वजन्मके कर्मानुसार यदि किसीकी मृत्यु अवश्यम्भावी है तो उसके प्रतीकारके लिये अनेक प्रकारके उपाय करनेपर भी मनुष्य उसे टाल नहीं पाता। अतः यहाँ पूर्वकृत कर्म

अतः निष्कर्ष यही निकलता है कि सदैव कर्मोंमें ही संलग्न—तत्पर रहना चाहिये। वर्तमानमें आजके समयमें अभीके समयमें हर क्षण और हर पलमें व्यतीत हो रहे इस क्षण और पल शुभ कर्ममें सम्पन्न हों—यही ध्यानमें रखना है और करना है। अगर परिणाम बीच-बीचमें विपरीत और मनके अनुकूल नहीं भी आ रहा है तो घबड़ाना नहीं है। निराश-हताश और उदास नहीं होना है। पूर्वजन्म या पूर्वकाल (समय या अवधि)—में कोई-कोई कर्म अपने द्वारा अशुभ हो गया हो तो उसके कारण ही विपरीत फल आ रहा है। परन्तु और अधिक या बार-बार विपरीत फल नहीं आने पाये—इसके लिये मनोयोगपूर्वक और उत्साहके साथ शुभ कर्ममें संलग्न, गम्भीर तथा तत्पर रहा जाय तो अन्ततः जीवनमें शुभ फल आयेगा ही। भले ही कुछ या कभी-कभी अशुभ फल मनको दुःखित और उदास करनेवाला आ जाय। लेकिन जीवनमें शान्ति देनेवाला शुभ फल ही अन्ततः आयेगा और आता रहेगा। यही दृढ़ धारणा और मान्यता मन और अन्तःकरणमें रख करके शुभ कर्ममें सदैव संलग्न रहे और जीवनके परम शुभ फल शान्तिको प्राप्त करे या कर ले।

जो ब्रह्मानन्दस्वरूप अथवा ज्ञानोपदेशद्वारा ब्रह्मानन्दकी प्राप्ति करानेवाले, परम सुखद, अद्वितीय ज्ञानमूर्ति, द्वन्द्वोंसे रहित, आकाशसदृश निर्मल, 'तत्त्वमसि' आदि वेदान्त महावाक्योंके लक्ष्यार्थरूप, एक, नित्य, निर्मल, निश्चल, सम्पूर्ण बुद्धि-वृत्तियोंके साक्षी, समस्त भावोंसे परे तथा तीनों गुणोंसे रहित हैं; उन परब्रह्मस्वरूप श्रीवसिष्ठजीको हम नमस्कार करते हैं। [योगवासिष्ठ]

## उत्तम गृहवधू

( परम पूज्य स्वामी श्रीगोविन्ददेवगिरिजी महाराज )

वेदोंमें प्रतिपादित आश्रमव्यवस्थामें गृहस्थाश्रमकी विशेष महत्ता गायी गयी है। मनुस्मृतिमें कहा गया है—

यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।

तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः॥

( मनु० ३। ६६ )

भगवान् मनुका तो यहाँतक कहना था कि हमलोग देव-ऋण, पितृ-ऋण और ऋषि-ऋणसे मुक्त होनेके बाद ही अपना मन मोक्षकी ओर बढ़ायें। इन तीनों ऋणोंसे मुक्ति पानेके लिये गृहस्थाश्रम अनिवार्य होता है। महाकवि कालिदास तो गृहस्थाश्रमको 'सर्वोपकारक्षम' कहते हैं। अन्य तीनों आश्रम गृहस्थ-आश्रमपर ही टिके हुए हैं। गृहस्थाश्रमके लिये 'गृह' अर्थात् 'घर'की जरूरत होती है और घरसे भी ज्यादा जरूरत होती है उत्तम 'गृहिणी'की—'न गृहं गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते।' यहाँपर गृहिणीको यथार्थ गौरव प्रदान किया गया है। गृहस्थाश्रमके केन्द्रमें स्थित यह गृहिणी कैसी होनी चाहिये? इस सन्दर्भमें मार्गदर्शन करते हुए वैदिक ऋषि कहते हैं—

सुमंगली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शम्भूः।

स्योना श्वश्र्वै प्र गृहान् विशेषान्॥

( अथर्ववेद २४। २। २६ )

विवाहके बाद नये घरमें नववधूका पदार्पण होता है। ऐसी मंगल वेलाके समय ऋषि उसे कहते हैं—'गृहस्थोंके लिये कल्याणप्रदा एवं उद्धारकर्त्री देवी! तुम अपने पतिकी मनसे सेवा करनेवाली, श्वसुरको सुखशान्ति प्रदान करनेवाली और अपनी सासके लिये सुखदायक नारी हो। तेरा इस घरमें प्रवेश करते समय स्वागत है।' इस मन्त्रमें आशीर्वाद और अपेक्षाका सुन्दर मिलाप करते हुए 'आदर्श बहू'का चरित्र समाजके सम्मुख प्रस्तुत किया गया है। वैदिक ऋषि नववधूके लिये मंगल कामना करते हुए कहते हैं—'हे विवाह देवता! यह वधू सुमंगली है—मंगलरूपा है, अतः इसे आप मंगल दृष्टिसे देखें। इस वधूको सौभाग्य प्रदान करें। इसके गार्हस्थ्यको

नष्ट न करें।

ॐ सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत।

सौभाग्यमस्यै दत्त्वा याथास्ति विपरेत न॥

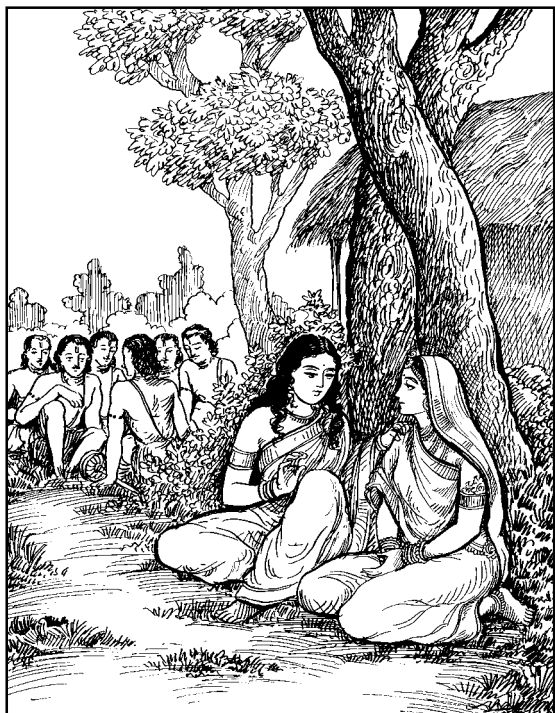
समाजका केन्द्र होता है 'परिवार' और परिवारका केन्द्र होती है, घरमें अनेकरूपोंमें आनेवाली गृहलक्ष्मी। घरकी व्यवस्था, सुख-शान्ति, सबके साथ बनाया गया सम्बन्ध, घरका माहौल आदि इन सभी बातोंपर नववधूके व्यक्तित्वका प्रभाव सहजताके साथ पड़ता है। घरकी प्रतिष्ठाकी रीढ़की हड्डी यदि कोई है तो वह है—गृहिणी। वह कैसी हो? इस सन्दर्भमें अपनी अपेक्षाओंका वर्णन अत्यन्त संक्षेपमें और स्पष्ट शब्दोंमें उपरोक्त मन्त्रमें किया गया है। अपने घरको प्रगतिकी ओर ले जानेका दृढ़ संकल्प हर गृहिणीको करना चाहिये। वह सबकी 'तारिणी' बने। ऐहिक उत्कर्ष होते समय समृद्धिकी दिशाको वह भोगविलासकी ओर न मोड़े, अपितु शिक्षा, आरोग्य, सद्बिचार—जैसे सद्गुणोंके विकासकी ओर ही वह अग्रसर हो। घरके हर सदस्यकी इस दिशामें प्रगति हो—ऐसी भावना रखकर घरका वातावरण मंगलमय बनाये रखनेके लिये उसे सदैव जाग्रत् रहना चाहिये। परिवारकी जटिलसे जटिल समस्याको चुनौती समझकर उस समस्याका समाधान ढूँढ़नेकी कोशिश उसे करनी चाहिये।

पतिके संग उसे अन्य कई कर्तव्योंका पालन करना पड़ता है। सास-श्वसुरको तथा अन्य सभी पारिवारिक सदस्योंको अपने आचार-व्यवहारसे सुख-शान्ति मिले, इस बातकी ओर भी उसे हमेशा ध्यान देना चाहिये। आदर्श बहूका यह वेदोंमें व्यक्त किया हुआ चित्र भगवती सीता तथा महासती द्रौपदीके जीवनमें साकार नजर आता है।

वनवासके समय एक बार श्रीकृष्ण सत्यभामा-सहित पाण्डवोंसे मिलने वनमें गये। वहाँ एकान्तमें सत्यभामाजीने द्रौपदीसे पूछा—'तुमने कौनसे मन्त्रसे सबको वशमें कर रखा है? सत्यभामाके इस प्रश्नका

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

उत्तर देते हुए द्रौपदीने परिवारवालोंके बीच अपनी



भूमिकाका प्रतिपादन इस प्रकार किया। प्रातः सबसे पहले मैं उठती हूँ। माता कुन्तीके स्नानादिकी तैयारी मैं स्वयं करती हूँ। पतिदेवों और उनके मित्रोंके खान-पानकी आवश्यकताओंको मैं स्वयं पूर्ण करती हूँ। घरका तथा अपने राज्यका हिसाब-किताब देखे बिना कभी भी मैं सोती नहीं। घरके सभी नौकर-चाकर तथा हजारों अतिथियोंका स्वागत-सत्कार मैं स्वयं करती हूँ। मैं अहंकार, काम, वासना, क्रोध तथा

दुष्ट भावोंसे दूर रहकर पाण्डवों तथा उनकी पत्नियोंकी सेवा करती हूँ। कभी गर्व नहीं करती। मेरे पति जैसा चाहते हैं, वैसा ही कार्य करती हूँ। उनपर कभी संदेह नहीं करती और न उनसे कभी कठोर वचन ही कहती हूँ। कभी निन्दित स्त्रियोंकी संगतिमें नहीं बैठती और न उनसे मित्रता ही रखती हूँ।

इस प्रकार द्रौपदीने ‘उत्तम गृहवधू’ बननेके और भी अनेक उपायोंसे सत्यभामाजीको परिचित कराया। पाण्डवोंको कर्मयोगकी प्रेरणा देनेवाली इस महान् पत्नीको जब द्यूतक्रीडामें पाण्डवोंद्वारा दाँवपर लगा दिया जाता है और पाण्डवोंकी हार होती है, तब भी धृतराष्ट्रसे वर माँगकर द्रौपदीने अपने पतियोंकी शस्त्रोंसहित मुक्ति करवायी और अब मुझे पतियोंके अलावा अन्य किसीसे कुछ भी याचना नहीं करनी—ऐसा जवाब देकर उसने पत्नीपदकी प्रतिष्ठा बढ़ायी थी।

सत्कर्ममें जो हमेशा साथ दे, वही उत्तम पत्नी है। पत्नीरूपी नौकाके कारण ही पतिको संसारसागरको पार करना सम्भव होता है। धर्मपत्नीरूपी नौका कैसी हो? इस सन्दर्भमें वैदिक ऋषियोंद्वारा किया गया मार्गदर्शन अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। सेवा और सात्त्विकताके बलपर सबको जीतनेवाली बहू गृहराज्यकी साम्राज्ञी होती है—ऐसा वेदोंमें स्पष्टरूपसे कहा गया है। बहू घरकी लक्ष्मी है, बहू घरकी देवी है, बहू घरकी शान्ति है और बहू ही घरके विकासकी जड़ है।

## ‘जो मोहि राम लागते मीठे’

जो मोहि राम लागते मीठे ।

तौ नवरस षटरस-रस अनरस हैं जाते सब सीठे ॥

बंचक बिषय बिबिध तनु धरि अनुभवे सुने अरु डीठे।

यह जानत हौं हृदय आपने सपने न अघाड़ उबीठे ॥

तुलसिदास प्रभु सों एकहि बल बचन कहत अति ढीठे ।

नामकी लाज राम करुनाकर केहि न दिये कर चीठे ॥



## विकासका भयावह पक्ष

( श्रीगणेशदत्तजी दूबे )

हमारी आध्यात्मिक सोचके साथ वैज्ञानिक प्रगति हमें ऐसे सत्योंकी ओर ले आयी जबकि हम अनबूझ रहस्योंको भी समझने और जानने लग गये। पक्षियोंकी तरह हमारे पंख लग गये। संचार और यातायातके साधनोंकी उन्नतिके साथ-साथ दुनिया ग्लोबल विलेजमें बदलती जा रही है और ब्रह्माण्ड भी हमें छोटा लगने लग गया है। अणुशक्तिके रूपमें हमें अपरिमित शक्तिका स्रोत नजर आया, परंतु हिरोशिमा तथा नागासाकीके विध्वंस तथा चेरनोबिल (रूस)-के रिएक्टरके आणविक रसायनके रिसावने हमें भयभीत कर दिया है। जिसे हम अलादीनका चिराग समझ बैठे थे, वही चिरागका जिन्न हमारी आज्ञाओंको माननेके बजाय हमें ही डराने लगा है।

बहुत कुछ हमें विज्ञानसे मिला है, परंतु मनुष्यने अन्ततोगत्वा वैज्ञानिक प्रगतिके नामपर अपनेको केवल भय ही दिया है। वैज्ञानिक उपकरणोंसे उत्पन्न गैसोंसे हमने अपने आकाशमें ओजोनके परतमें छेद कर दिया है, जिससे कि मनुष्यको भय लगने लगा है कि सूरजकी धूपमें हम निकलनेको तरसने लगेंगे। हमारे कल-कारखानों, मोटर-वाहनों तथा मशीनोंने इतना धुआँ उगलना प्रारम्भ किया (जिनमें अनेक हानिकारक गैसों होती हैं) कि अपनी सुरक्षाके लिये हम कहने लगे कि साइकिलपर चलो और वाहनोंका प्रयोग कम करो। उनका रख-रखाव ऐसा करो, जिससे कि वे कम हानिकारक गैसों निकालें। ताजा आकलनसे ज्ञात होता है कि वायुका ६० प्रतिशत प्रदूषण केवल वाहनोंसे निकली गैसोंसे है।

शरीरका अस्सी प्रतिशत तो जल ही है। अतएव जल ही जीवन है, परंतु जल भी तो प्रदूषित हो गया है। गंगा, जिसे हम युगोंसे पूजनीय मानते आये हैं और जो **‘दरस परस मज्जन अरु पाना’** से मुक्ति दिलानेका सामर्थ्य रखती है, कल-कारखानोंके कचरेने उसके भी अस्तित्वको संकटमें डाल दिया है। कहीं-कहीं उसमें प्रदूषणका स्तर इतना बढ़ गया है कि लोग उसमें स्नान करनेसे कतराते हैं तथा पान करनेका तो उनके लिये प्रश्न ही नहीं उठता।

भोजन वायु तथा जलकी हमारे जीवनके लिये महती आवश्यकता है। ये तीनों ही जब प्रदूषित हो गये हैं तो मानव-जीवन कैसे बचेगा? यदि आजके युगमें यक्ष युधिष्ठिरसे पूछता 'किं आश्चर्यम्?' तो युधिष्ठिर यही कहते कि इतने प्रदूषणके होते हुए भी मनुष्य जीवित है, यही आश्चर्य है। अब एक और बड़ी त्रासदीसे मनुष्य गुजरनेवाला है।

वैज्ञानिक इस खतरेकी ओर भी सबका ध्यान आकर्षित करने लगे हैं कि पृथ्वीका तापमान जब आगे बढ़ जायगा तथा पर्वतोंपर जमा हिम पिघलकर समुद्रमें पहुँचेगा तो इससे सागरोंका जलस्तर बढ़ जायगा। ऐसेमें क्या शास्त्रोंमें वर्णित जलप्लावनकी ओर हम असमय ही अग्रसर नहीं हो रहे हैं ?

वनस्पतियाँ एवं पेड़-पौधे हमारी हरी-भरी धरती माँके लिये श्रृंगार हैं। ये हमारे लिये आवश्यक प्राणवायुको सन्तुलित बनाये रखते हैं। हमारी औद्योगिक तथा सामाजिक गतिविधियाँ इतनी खतरनाक हो गयी हैं कि हमने अन्धाधुन्ध पेड़ काटने शुरू कर दिये। वनोंके विनाशने हमें ऐसे कगारपर ला खड़ा किया कि आज पर्यावरणका सन्तुलन ही बिगड़ गया। आज यही पेड़ हमारे मित्र प्रतीत हो रहे हैं। हम आज कंक्रीटकी विशाल अट्टालिकाओं छतों तथा छज्जोंपर भी हरीतिमाका प्रबन्ध करनेकी सलाह देने लगे हैं।

ध्वनिविस्तारक यन्त्रोंका आविष्कार इस उद्देश्यसे किया गया था कि हम किसी भी वक्ताकी बातोंको ठीक ढंगसे सुन सकें। आज तो हालत यह हो गयी है कि ये ध्वनिविस्तारक यन्त्र, चाहे मोटर-गाड़ियोंमें लगे हों या किसी सभास्थलपर, हमारे लिये ध्वनिप्रदूषणका कार्य कर रहे हैं। यदि पूजाका कार्य हो तो भी ध्वनिविस्तारकसे इतना शोर मचाते हैं कि पड़ोसीको इस पूजाके प्रति श्रद्धा होनेके बजाय क्रोध आने लगता है। ध्वनिविस्तारक यन्त्रोंपर अखण्ड कीर्तनकर हम किसे बता रहे हैं? भगवान्को या पड़ोसीको जता रहे हैं कि हम पूजा या कीर्तन कर रहे हैं? अन्तःकरणकी आवाज सुन लेनेवाले भगवान्को क्या ध्वनिविस्तारककी ध्वनिकी आवश्यकता पडने लगी!



सुखोंमें मनुष्य प्रभुको भूल जाता है, उसका अहंकार बढ़ जाता है और अहंकारी व्यक्तिको आत्मशान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। अतः मायाके वशीभूत न होकर सदैव प्रभुका स्मरण अवश्य करना चाहिये। रोजाना टी०वी० देखने, गप्प-शप्प करने तथा अपने शरीरको सजानेमें हम कई घंटोंका उपयोग करते हैं, किंतु हमें आत्मशान्ति कैसे प्राप्त हो—इसपर विचार करनेके लिये हमारे पास समय नहीं होता है। आत्मावलोकनके लिये कुछ समय अवश्य निकालना चाहिये। जिस तरह आपको अपने व्यवसायसे क्या लाभ-हानि हुई, प्रतिवर्ष इसपर विचार करते हैं, उसी तरह अपनी आत्माको जगानेके लिये कुछ क्षण अपने अमूल्य समयमेंसे देंगे तो निःसन्देह आत्मशान्ति, अलौकिक आभा, आत्मचिन्तन तथा आध्यात्मिक चरमोत्कर्षको प्राप्त कर सकते हैं। इसलिये निराशा छोड़कर आशावादी बनना चाहिये। आत्ममन्थनद्वारा आध्यात्मिक नवनीत प्राप्त होता है और आत्मशान्तिकी प्राप्ति होती है।

## संत-वचनामृत

( वृन्दावनके गोलोकवासी संत पूज्य श्रीगणेशदास भक्तमालीजीके उपदेशपरक पत्रोंसे )

❖ जन्म-जन्मान्तरके अशुभ संस्कारोंको मिटानेके लिये निरन्तर नाम-जप आदि साधन आवश्यक हैं। श्रेष्ठ नाम-स्मरण ही है। दूसरे साधनोंके योग्य हम नहीं हैं। आवश्यक काम-काज करनेके बाद या करते-करते भी नाम-जपका अभ्यास बढ़ाना चाहिये। नाममें प्रेम होना और भगवान्में प्रेम होना एक ही बात है। नाम-जपके साथ ही यह नहीं सोचना चाहिये कि हमें सिद्धि नहीं मिली, कोई अनुभव नहीं हो रहे हैं। नाम-जपमें एकाग्रताके बढ़ जानेपर विषयोंसे वैराग्य हो जायगा। अन्तःकरण यानी मन, बुद्धि, चित्त, अहंकारकी शुद्धि हो जायगी। तब स्वयं दिव्य अनुभव होने लग जायेंगे। नाम-जपको ध्यानपूर्वक करना चाहिये या बिना ध्यानके? ऐसा कोई प्रश्न करे तो उसका उत्तर यह है कि ध्यानसहित नामका जप अति श्रेष्ठ है, परंतु आरम्भमें यदि ध्यानसहित नाम-जप नहीं बने तो बिना ध्यानके ही जप करना चाहिये, पर जप करते समय मनको इधर-उधर अनिष्ट विषयोंमें नहीं जाना चाहिये। जाय तो रोकना चाहिये। लीला-चिन्तन या रूप-चिन्तन, शोभा-चिन्तन, धाम-चिन्तन—जो भी सम्भव हो, उसे नाम-जपके साथ करना चाहिये। कीर्तन करते समय गानेमें मनको एकाग्र करना चाहिये। नामके अर्थ अथवा लिखे हुए नाममें ही मन लगाना चाहिये। कृपा करके जिह्वाके ऊपर भगवान् ही नामके रूपमें प्रकट होते हैं। अपने नाम-जपका प्रचार न करके उसे गुप्त रखना चाहिये। किसी साधकको नाम-जपमें लगानेके लिये अपना नाम-जप-भजन कहा—बताया जा सकता है। अहंकार न हो। बड़प्पन न आये।

❖ रामनामका आश्रय लेनेवाले ही कलियुगके दोषोंसे बचते हैं, अन्यथा बड़े-से-बड़ा भी कोई बच नहीं सकता है। एक संत सुदामा कुटीमें रहते हैं, उन्होंने बताया कि मेरे सामने कलियुग आया और उसने यह बात कही, उसी दिनसे अब मैं समयसे राम-मन्त्र जपता

हूँ। भगवान्का नाम, रूप, लीला, धाम—ये चारों समान हैं। इनमें एकता रहती है। इनमेंसे एकका भी आश्रय यदि कोई लेता है तो उसका कल्याण हो जाता है। इन चारोंमें नाम सबसे ज्यादा सुलभ है। नाम लेनेमें कोई विधि-विधान नहीं, अपवित्रता-पवित्रताकी भी आवश्यकता नहीं है। यदि छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष आदिको छोड़कर नाम लेता है तो उसका अवश्य कल्याण हो जाता है।

❖ 'रामो विग्रहवान् धर्मः' श्रीराम धर्मकी मूर्ति हैं। 'श्रीराम जय राम जय जय राम' यह भगवन्नाम है और वैदिक मन्त्र भी है। कम-से-कम बाईस बार जप करनेवाला धन्य है। रामनामसे बढ़कर दूसरा कोई नाम नहीं है। इसका जापक भक्ति-मुक्ति आदि अभीष्ट पदार्थ पाता है। भगवत्प्राप्तिका उपाय क्या है, इसे जीव नहीं जानता; स्वयं ही भगवान् आकर बताते हैं। सदा जप, तप, अनुष्ठानमें निमग्न रहकर विश्व-कल्याणकी माँग करनी चाहिये।

❖ भगवान्के नाम, रूप, धाम एवं सभी लीलाएँ मंगलमय हैं। जहाँ-जहाँ जो-जो लोग भगवान्का आश्रय लेते हैं, वहाँ उनको मंगल—कल्याणकी प्राप्ति होती है।

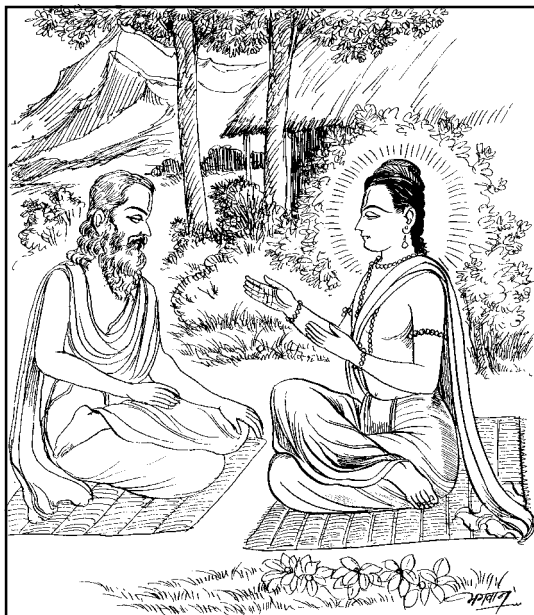
❖ मनमें नाम लेनेसे मुक्ति प्राप्त होती है और वाणीद्वारा उच्चस्वरसे कीर्तन करनेवालेको भक्ति प्राप्त होती है। उच्चस्वरसे किया गया कीर्तन अपनी वाणीके साथ अपने तथा दूसरोंके भी कर्णोंको पवित्र कर देता है, अतः गौरांग प्रभु आदि भक्तजनोंने 'उच्चैर्भाषा तु कीर्तनम्' को श्रेष्ठ बताया।

❖ रामनाम-महिमा। 'राम=राक्षसानां मरणं यस्मात्।' 'र' का अर्थ है राक्षसगण और 'म' का अर्थ मरण। काम, क्रोध, मान, मद आदि राक्षस जिससे मरते हैं, वह है रामनाम। श्रीकबीरके शिष्य श्रीपद्मनाभने श्रीरामनामसे कुष्ठीको निरोग किया था। इसपर उनसे कबीरने कहा कि नामका इतना ही माहात्म्य नहीं है। यह संसार-बन्धन तो

## रामकी शंकाका निवारण

( डॉ० श्रीमती मीनाजी गुप्ता )

वनवासके समय प्रभु श्रीरामजीको केवटने गंगा पार करवायी। फिर वे भारद्वाजमुनिके आश्रममें कुछ समयतक रहे। तत्पश्चात् मुनिसे विदा लेकर सीता और लक्ष्मणसहित यमुना पारकर सत्संग-लाभ प्राप्त करनेहेतु महर्षि वाल्मीकिके आश्रममें पधारे। पहले श्रीरामने, फिर सीताजी और लक्ष्मणजीने मुनिवरको प्रणाम किया। महर्षिने उन्हें आशीर्वाद देकर उचित आसनपर बैठाया। फिर उन्होंने कन्द-मूल-फल लाकर अतिथियोंको ग्रहण करनेके लिये प्रेमपूर्ण आग्रह किया। मुनिवरका आतिथ्य ग्रहणकर श्रीरामने आदरपूर्वक हाथ जोड़कर विनती की, 'हे मुनिवर! आप त्रिकालज्ञ हैं। आपको तो ज्ञात ही होगा कि हमें चौदह वर्ष वनवासमें व्यतीत करनेकी माता-पिताने आज्ञा दी है। आप हमें ऐसा सुरक्षित स्थान बतलाइये, जहाँ मैं भाई लक्ष्मण और सीतासहित निवास कर सकूँ। आप तो वनोंमें विचरण करते रहते हैं। अतः आपको यहाँके विषयमें भलीभाँति जानकारी होगी।'



रामजीकी विनम्र वाणी सुनकर ऋषि वाल्मीकि गद्गद हो गये। वे मुसकराते हुए बोले, 'हे रघुकुलशिरोमणि, आप धन्य हैं। आप सदैव मर्यादाओंका पालन करते हैं। आप सम्पूर्ण विश्वके ज्ञाता हैं।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी आपका ध्यान धरते हैं। जब वे भी आपके मर्मको नहीं जान पाते, तब दूसरा कौन आपको जान सकता है।'

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई॥  
तुम्हरिहि कृपाँ तुम्हहि रघुनंदन। जानहिं भगत भगत उर चंदन॥

जिसे आप चाहते हैं, वही आपको जान पाता है, आपको जानते ही वह आपका ही स्वरूप बन जाता है। हे राम! हे भक्तोंके हृदयको शीतल करनेवाले चन्दन! आपकी ही कृपासे भक्तलोग आपको जान पाते हैं। आप इस समय मनुजरूपमें हैं। इसलिये मनुष्योचित व्यवहार उचित ही है। लेकिन मैं क्या बताऊँ?

पूँछेहु मोहि कि रहों कहँ मैं पूँछत सकुचाउँ।

जहँ न होहु तहँ देहु कहि तुम्हहिं देखावों ठाऊँ॥

आप तो सर्वव्यापक हैं। आपको मैं कौन-सा स्थान बताऊँ? आप ही ऐसा कोई स्थान बताइये, जहाँ आप न हों? तब मैं आपके लिये रहनेका स्थान बताऊँगा। मुनिवरकी बात सुनकर प्रभु रामके मुखपर मुसकान खिल उठी। वे बोले, 'यह सब तो ठीक है, परंतु मुझे रहनेके लिये कोई उपयुक्त स्थान बताइये।'

वाल्मीकिजीने मधुर वाणीमें कहा, 'हे रामजी! सुनिये, अब मैं वे स्थान बताता हूँ, जहाँ आप सीताजी और लक्ष्मणजीके सहित आनन्दपूर्वक निवास करें। रामजीको चौदह वर्षोंका वनवास मिला था, अतः मुनिवरने प्रभुको चौदह ऐसे स्थान बताये, जहाँ वे सुरक्षित रूपमें रह सकते हैं।'

१-जिनके कान आपकी अमृतमयी कथाओंको सुनकर कभी तृप्त नहीं होते, ऐसे भक्तोंके हृदयमें आप निवास कीजिये।

२-अपने नेत्रोंको जिन्होंने चातक बना रखा है, जो आपके दर्शनरूपी मेघके लिये सदैव लालायित रहते हैं, ऐसे भक्तोंके हृदय आपके निवासहेतु सुखदायी





संत-चरित—

## भक्त नीलाम्बरदास

‘भोग और भगवान्—इन दोनोंमेंसे किसका आकर्षण अधिक है?’ इस प्रश्नके उत्तरमें बहुत लोग यह कहा करते हैं कि भोग या विषयका आकर्षण ही अधिक है। परंतु तत्त्वज्ञानी महात्माओंको इस बातमें कोई सार नहीं दीखता। वे इस बातको जानते हैं कि किसी एक अज्ञात कारणसे मनुष्य जब अपने आस-पासकी वस्तुओंको और अपनेको सर्वथा भुलाकर ‘भगवान्-भगवान्’ पुकारता हुआ दीवानेकी तरह यथारुचि जहाँ-तहाँ विचरता है, उस समय इस संसारका कोई भी पदार्थ उसे अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकता। इस प्रकार आत्मभावको भुला देनेकी भगवान्‌में शक्ति है, इसीसे तो उनको ‘भुवन-मोहन’ कहते हैं। जो सौभाग्यसे उनके आकर्षणसे खिंच जाते हैं, उन्हींको उनके प्रभावका पता लगता है।

भक्त नीलाम्बरदास ऐसे ही भगवद्भक्तोंमेंसे एक थे। उनके अहोभाग्यकी सीमा नहीं थी। वे उन ‘भुवनमोहन’-की मोहनीसे उनकी ओर खिंच गये थे और उनके प्रभावको भी जान गये थे। नीलाम्बरदास सब तरहसे सुखी थे—उनके स्त्री, पुत्र, धन, पूरा परिवार था तथा मान-प्रतिष्ठा आदि सब कुछ था। परंतु जिस क्षणसे वे उस मोहन-मन्त्रसे आकर्षित होकर भगवान्‌के आकर्षणमें पड़े, उसी क्षणसे इन सारी वस्तुओंके बन्धन ढीले पड़ गये। वे अपनेको स्त्री-पुत्र, धन-मान आदि मायाके बन्धनोंसे बँधे हुए और उनके संगमें रहकर अपने जीवनको व्यर्थ बीतता हुआ समझने लगे। उनके मनमें यह विचार बारम्बार आने लगा। अन्तमें उन्होंने सब कुछ त्यागकर घरसे चले जानेका निश्चय कर लिया।

नीलाम्बरदासका यह निश्चय कंगालके मनोरथकी भाँति केवल मनमें ही उत्पन्न होकर वहीं लय नहीं हो गया। इस निश्चयने उनको सच्चा विषय-विरागी और संसार-त्यागी बना दिया। अहा! ऐसा न हो तो भगवान्‌के आकर्षणका प्रभाव ही क्या है?

नीलाम्बरदासने घर छोड़कर व्याकुल-चिन्तसे श्रीजगन्नाथजीका रास्ता लिया। वे भगवान्‌के दर्शन करनेके लिये बहुत ही व्याकुल थे। उनकी स्थिति

स्नेहमयी जननीसे बिछुड़े हुए बालककी-सी थी। जैसे छोटा बालक माताको याद करता है और याद कर-करके रोया करता है, वैसे ही नीलाम्बरदासके मनमें भी निरन्तर भगवान्‌की ही याद बनी रहती थी और वे उन्हींके लिये बिलख-बिलखकर रोया करते। वे भगवान्‌का स्मरण करते हुए जैसे बने वैसे ही शीघ्र जगन्नाथपुरी पहुँच जाना चाहते थे। उनको दिशाका ज्ञान नहीं था, आहार-निद्राका भी पता न था। वे आँखें मूँदे झूमते हुए मनमें भगवान्‌का स्मरण करते आगे बढ़े चले जा रहे थे। एक सच्चे प्रेमीका अपने प्रेमास्पदसे मिलनेके लिये ऐसा ही दीवानापन हुआ करता है। नीलाम्बरदासके गाँवसे श्रीजगन्नाथपुरी समीप न थी। कहाँ तो अत्यन्त उत्तर इनका घर और कहाँ दक्षिणमें पुरी, परंतु इन्हें चलते रहनेके सिवा और किसी बातकी भी सुधि न थी। इस तरह वे बहुत-से वन-पर्वत, नदी-नाले, निर्जन-जल शून्यस्थलों और बीहड़ वनोंको लाँघते हुए गंगाजीके तटपर आ पहुँचे। वर्षा ऋतु थी, गंगाजीमें बाढ़ आ रही थी, कहीं कोई किनारा नहीं दीखता था। गंगाजीकी उछलती हुई तरंगोंकी ओर देखनेकी भी हिम्मत नहीं होती थी, देखते ही हृदय भयसे काँप उठता था।

नीलाम्बरदासको नदीके उस पार जाना था। नौकाके बिना पार जाना असम्भव था, पर नौका कहीं देखनेको भी नहीं थी। नीलाम्बरदास मन-ही-मन बहुत घबराये। उस समय उनके दुःखका पार नहीं था। वे अनेक गाँवों और वनोंको लाँघकर चले आ रहे थे। शरीर खूब थक गया था, सूर्यदेव अस्ताचलको जाना चाहते थे। इससे पूर्व ही उस पार पहुँचना आवश्यक था, परंतु वे जिस स्थानपर खड़े थे, वहाँ बस्तीका होना तो दूर रहा, मनुष्यकी गन्धतक भी नहीं थी। ऐसे निर्जन स्थानमें घाट कितनी दूर है, इस बातको वे किससे पूछते? ऐसी स्थितिमें श्रीहरिके स्मरणके सिवा और कोई आधार न था। नीलाम्बरदास भगवान्‌का भजन करने लगे।

भजन करते-करते कुछ समय बीत गया, इतनेमें ही एक मछुआ नदीमें जाल फेंककर मछली पकड़ता हुआ

अपनी नौकासहित वहाँ आ पहुँचा। उसे देखकर नीलाम्बरदासको बड़ा आनन्द हुआ। वे भगवान्‌को धन्यवाद देने लगे और नाववालेको पुकारकर कहने लगे—‘भाई! कृपा करके नावको जरा इस ओर ले आ और इस विपत्तिमें पड़े हुए ब्राह्मणको उस पार उतारकर उपकार कर। पैसेके लिये मत घबरा। पार पहुँचाकर तू जो माँगेगा, वह तूझे अवश्य दे दिया जायगा।’

नीलाम्बरदासकी आवाज सुनकर मछुएने नाव किनारेकी ओर मोड़ दी और मीठा-मीठा बोलकर नीलाम्बर-दासको नौकामें बैठा लिया। नावपर चढ़ते ही नीलाम्बरदासके आनन्दका पार न रहा। वे मन-ही-मन भगवान्को असंख्य धन्यवाद देने लगे। इधर ब्राह्मणको नावमें बैठाकर मछुआ भी बहुत खुश हुआ और वह भी मन-ही-मन भगवान्को धन्यवाद देने लगा, परंतु दोनोंके धन्यवादके कारणोंमें बड़ा अन्तर था। नीलाम्बरदास भगवान्के शीघ्र दर्शन पानेके लिये तड़प रहे थे। इस विषम स्थितिमें भगवान्ने नाव भेजकर गंगाके उस पार पहुँचानेका प्रबन्ध कर दिया, वे इस बातके लिये भगवान्को धन्यवाद दे रहे थे। इधर मछुआ एक असहाय, निर्बल मनुष्यको पंजेमें फँसा हुआ शिकार समझकर ईश्वरका उपकार मान रहा था। उसने नीलाम्बरदासको नदीके बीचमें ले जाकर मार डालने और उनके पास जो कुछ था, उसे छीन लेनेका विचार कर लिया था। इसीसे वह मन-ही-मन फूला न समा रहा था।

बेचारे मूर्ख मछुएको यह पता न था कि नीलाम्बरदासका जीवन-धन, उनका सर्वस्व उनके कन्धेकी झोलीमें नहीं, अपितु हृदयकी ऐसी गूढ पिटारीमें था, जहाँसे उसे कोई भी लूट नहीं सकता था। उस बेचारेको नीलाम्बरदासकी स्थितिका पता कैसे होता ? वह तो उन्हें रुपयेकी थैली साथ लिये घूमनेवाला साधारण मुसाफिर समझकर ही उन्हें मारकर धन लूटनेकी इच्छासे नावको नदीके बीचमें ले जानेकी ताकमें था। मछुएको किनारेसे हटकर दूसरी ही ओर जाते देखकर नीलाम्बरदासने कहा—“भाई ! तू बड़ा साहसी आदमी मालूम होता है, नहीं तो ऐसे तूफानमें नदीके अन्दर नाव लानेकी हिम्मत भला कौन कर सकता है ! परन्तु भाई ! अब सर्वदेव का प

रहे हैं, दिन रहते-रहते किनारे पहुँच जाना अच्छा है, इसलिये नौकाको किनारेकी ओर ले चलो।'

परंतु उनकी बात कौन सुनने लगा ? मछुएके मनमें तो दूसरी ही बात थी, अतएव उसने नौकाको नदीके बीचमें चलाना जारी रखा। नीलाम्बरदासजीकी बातोंके जवाबमें उसने मुसकराकर मुँह फेर लिया। मछुएका यह भाव देखकर नीलाम्बरदास उसके कुविचारको तुरंत ही ताड़ गये। एक बार तो वे कुछ घबराये; परंतु ऐसे समय घबराना अच्छा नहीं, यह सोचकर उन्होंने ईश्वरपर भरोसाकर साहसके साथ कहा—‘भाई! आखिर तेरा क्या अभिप्राय है ? क्या तू मुझे मार डालना चाहता है ? अच्छी बात है, मैं भी देखूँगा, तू मुझे कैसे मारता है ?’

नीलाम्बरदासके वचन सुनकर मछुएने जोरसे हँसकर गम्भीर स्वरमें कहा—‘ओहो! तुम तो बड़े मिजाजी मालूम होते हो, अब तुम्हारा काल समीप आ पहुँचा है। बस, जरा-सी देर है। लो, अब तुम्हें जिसको याद करना हो, कर लो, तुमको मैं अभी नीलाचल पहुँचा देता हूँ।’

नीलाम्बरदासने मछुएके वचन सुने, वे शंकासे कुछ घबराये भी। पर यह घबराहट मरनेके लिये न थी। वह थी भगवान्‌के दर्शन होनेसे पहले ही मर जानेकी। वे एकान्तचित्तसे निराधारके आधार और निर्बलके बल भगवान्‌का स्मरण करने लगे—‘भगवन्! दीनदयालु! मेरी रक्षा करो, रक्षा करो। तुमने पहले कितने शरणागतोंके दुःख दूर किये हैं, आज तुम अपनी शरणमें पड़े हुए इस ब्राह्मणके भी दुःखको दूर कर दो। अपनी दयारूपी नौकाके द्वारा इस विपत्ति-सागरमें पड़े हुएको बचा लो! प्रभो! एक बार दर्शन देनेके बाद फिर भले ही जो कुछ हो, परंतु इससे पहले कुछ न होने दो।’

भक्तभावन भगवान्ने तुरंत ही आर्त भक्तकी पुकार सुनी। ब्राह्मणके अन्तरका दुःख जानकर उसी समय भगवान् एक नौजवान राजपूत वीरके स्वरूपमें गंगाके किनारे प्रकट होकर ऊँचे स्वरसे मछुएको पुकारकर कहने लगे—‘अरे ओ मछुऐ! इधर आ, यदि जीवनकी आशा रखता हो तो तुरंत इधर चला आ, नावको तुरंत किनारे लगा।’

देखते-ही-देखते नौका गंगाजीके उस किनारेपर जा लगी। नीलाम्बरदास उतर पड़े। उधर भगवान् भी अन्तर्धान हो गये। मछुएके मनमें अपने कुकृत्यके लिये बड़ा पश्चात्ताप था। वह नीलाम्बरदासके चरणोंमें लेटकर क्षमा माँगने लगा। नीलाम्बरदास प्रसन्नतासे उसे आशीर्वाद देकर आगे बढ़े। अनेक गाँवों, शहरों, पहाड़ों, जंगलों और नदी-नालोंको पार करते हुए कुछ दिनों बाद

यही महिमा है ।

दैवयोगसे उसी दिन रथयात्रा थी, सारी पुरीमें आनन्द और उत्साह छाया हुआ था। 'हरि-हरि' और 'जय-जय' के घनघोर घोषसे आकाश भर गया था। वाद्योंकी ध्वनि और भक्त-मण्डलियोंके अमृतमय मधुर कर्णप्रिय संकीर्तनके स्वरोंसे सारा वातावरण व्याप्त था। नृत्य-कीर्तन तो कभी थमता ही न था। जिधर कान जाते थे उधर ही आनन्द-कोलाहल सुनायी पड़ता और जिस ओर नेत्र जाते थे, उसी ओर आनन्दोल्लासके दृश्य दिखायी पड़ते थे। श्रीबलराम, श्रीसुभद्रा और श्रीजगन्नाथजी—तीनों पृथक्-पृथक् उत्तम रथोंमें विराजित थे। भक्तगण बड़े आनन्दसे रथ खींच रहे थे और गम्भीर गर्जनाके साथ तीनों रथ चल रहे थे। आनन्दके आवेशसे कुछ लोग ताली बजा-बजाकर कूद रहे थे, कुछ आँसुओंकी वर्षा कर रहे थे तो कुछ जड़वत् निश्चेष्ट हो गये थे। इसी समय नीलाम्बरदास रथके पास आ पहुँचे। उनके आनन्दका पार न था, आनन्दके आँसू उनके नेत्रोंसे अविराम बह रहे थे। दीर्घकालतक यात्रा करके उन्होंने रास्तेमें भूख-प्यास, सरदी-गर्मीके तथा अन्य अनेक प्रकारके विघ्न और क्लेश सहे थे, वे सब यहाँ आनेपर सर्वथा भूल गये। प्रेमाश्रुओंके पवित्र अभिषेककी

नीलाम्बरदासने श्रीजगन्नाथजीमें तन्मय होकर अपने मनकी बात प्रभुसे कही। भक्त और भक्तभावन भगवान्की चार आँखें होते ही कुछ बातचीत हो गयी और देखते-ही-देखते भक्त नीलाम्बरदास श्रीजगन्नाथप्रभुके रथके सामने गिर पड़े। उन्हें गिरते देखकर सेवकगण उनके पास दौड़े गये, परंतु उन्होंने जाकर देखा कि उनके शरीरसे प्राण-पखेरू उड़ गये हैं। जो पक्षी क्षणभर पहले 'हरे कृष्ण राम राम, हरे कृष्ण राम राम' की ध्वनि कर रहा था, वह बोलता-बोलता ही न मालूम कहाँ उड़ गया। अवश्य ही भगवान्के परमधाममें पहुँचा होगा।

नीलाम्बरदासकी मुक्तिका समाचार सब ओर फैल गया। उनके मरणवृत्तान्तको सुनकर सभी आश्चर्य-चकित होकर ऐसे दर्लभ निधनकी प्रशंसा करने लगे।

अहा ! भक्तकी कैसी अपार महिमा है ! उनकी मृत्यु भी इस मृत्युलोकमें अमर होकर रहती है । आज भी उनके मरणकी जय-घोषणा श्रीजगन्नाथपुरीमें जगह-जगह सुननेमें आती है । किंतु भक्त तो कभी मरता नहीं । भक्त नीलाम्बरदास आज भी भगवद्भक्तिकी धारामें अवगाहन करते जा रहे हैं । ठीक ही है—‘न मे भक्तः प्रणश्यति ।’

## भगवद्गुण-महिमा

एकान्तलाभं वचसो नु पुंसां सुश्लोकमौलेर्गुणवादमाहुः ।

कुतः पुनस्तच्चरणारविन्दपरागसेवारतिरात्मलब्धा ॥

श्रुतेश्च विद्वद्भिरुपाकृतायां कथासुधायामुपसम्प्रयोगम् ॥

(श्रीमद्भा० ३।७।१२-१४)

(श्रीमद्भा० ३।६।३७)

महापुरुषोंका मत है कि पुण्यश्लोकशिरोमणि श्रीहरिके गुणोंका गान करना ही मनुष्योंकी वाणीका तथा विद्वानोंके मुखसे भगवत्कथामृतका पान करना ही उनके कानोंका सबसे बड़ा लाभ है।

निष्कामभावसे धर्मोंका आचरण करनेपर भगवत्कृपासे प्राप्त हुए भक्तियोगके द्वारा यह (देहाभिमानी जीवमें ही देहके मिथ्याधर्मोंकी) प्रतीति धीरे-धीरे निवृत्त हो जाती है। जिस समय समस्त इन्द्रियाँ विषयोंसे हटकर साक्षी परमात्मा श्रीहरिमें निश्चलभावसे स्थित हो जाती हैं, उस समय गाढ़ निद्रामें सोये हुए मनुष्यके समान जीवके राग-द्वेषादि सारे क्लेश सर्वथा नष्ट हो जाते हैं। श्रीकृष्णके गुणोंका वर्णन और श्रवण अशेष दुःखराशिको शान्त कर देता है; फिर यदि हमारे हृदयमें उनके चरण-कमलकी रजके सेवनका प्रेम जाग जाय, तब तो कहना ही क्या है।

स वै निवृत्तिधर्मेण वासुदेवानुकम्पया ।

भगवद्भक्तियोगेन      तिरोधत्ते      शनैरिह ॥

यदेन्द्रियोपरामोऽथ द्रष्टात्मनि परे हरौ ।

विलीयन्ते तदा क्लेशाः संसृप्तस्येव कृत्स्नशः ॥

अशेषसंक्लेशशमं विधत्ते गुणानुवादश्रवणं मुरारेः ।



## संत-संस्मरण

( परमपूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार )

❖ भक्तमालीजी महाराज अत्यन्त अनिकेत और अमानी संत थे। कोई संग्रह नहीं, सुदामा कुटीमें अपने पुस्तकालयमें एक चटाई जमीनपर बिछाकर सोते थे। पुस्तकें चारों ओर रहती थीं, कहते—‘**पुस्तकेषु वसाम्यहम्।**’ एक भक्त महिला सोमानीबाईको उनकी यह रहनी पसन्द नहीं थी। उन्होंने महाराजजीसे पूछे बिना एक चौकी लाकर पुस्तकालयमें रखवा दी, जिससे महाराज उसपर सो सकें। महाराजजीने जब चौकी देखी तो प्रसन्नतापूर्वक आज्ञा दी कि वेद भगवान् बाहर बरामदेमें रखे हैं, उन्हें आदरपूर्वक यहाँ लाकर चौकीपर विराजमान करा दो। भक्त महिलाका मन रखनेको यह भी कह दिया कि चौकीपर मेरे तो गिरनेका भय रहेगा। यह भक्तवत्सलता और निरपेक्ष सहजताका अनुपम उदाहरण है।

❖ महाराजजीमें क्षमा और उदारता भी अपरिमित मात्रामें दिखायी देती थी। सुदामा कुटीमें कथा हो रही थी। पुस्तकोंकी बिक्रीके कुछ रुपये लकड़ीकी आलमारीमें रखे हुए थे। एक विद्यार्थी जिसे इस बातकी जानकारी थी, उसने आलमारीका ताला तोड़कर रुपये चुरा लिये। रात्रिमें महाराजजी कमरेमें आये तब किसीने अलमारीकी ओर देखकर ताला टूटने और चोरीकी शंका व्यक्त की। महाराजजी तत्काल बोल उठे—रुद्र भगवान्की लीला हो गयी, तालेकी आयु समाप्त हो गयी। इसमें क्या विचार करना है। अपनी ओरसे नुकसानकी भरपायी करी। बार-बार उस विद्यार्थीको यादकर कहते—उसने पढ़ना क्यों छोड़ दिया? दो-तीन वर्ष बाद वह लड़का मरणासन्न स्थितिमें आया और बार-बार क्षमा माँगने लगा। महाराजजीने उसकी चिकित्सा करायी, कपड़े दिये और कहा कि माता-पिताकी सेवा करो। बीती बातकी ग्लानि मत करना, आते-जाते रहना। यह परदुःखकातरता संतका स्वभाव है।

❖ वे वाल्मीकि-रामायणका प्रसंग यादकर कहा

करते थे—‘**कार्य कारुण्यमार्येण न कश्चित् नापराध्यति।**’ भूल सबसे हो सकती है। १९९०-९१ के आसपासकी बात है। एक मुसलिम कम्पोजीटर कुछ काम माँगने आ गया। उसे भक्तमालके एक खण्डकी कम्पोजिंगहेतु अग्रिम राशि भी दे दी गयी। कुछ दिनों बाद उसने काम बन्द कर दिया और आया भी नहीं; बुलानेपर आकर उसने उद्घण्टतापूर्वक अग्रिम राशि लेनेकी बातसे साफ इनकार कर दिया। महाराजजीने जाते समय स्थितप्रज्ञ भावसे उससे कहा कि प्रसाद तो लेते जाओ। उसके जानेपर बोले कि अपनी भूलसे नुकसान हुआ है तो हम स्वयं ही उपाय करेंगे। कुछ महीनों बाद वह फटेहालमें महाराजजीके पास आकर क्षमा माँगने लगा और रोने लगा कि खानेको कुछ नहीं है। कुछ रुपये जो पासमें थे, उसे दे दिये, कुछ काम भी बता दिया।

❖ भिण्ड जिलेमें विजयरामदासजी महाराज बड़े विद्वान्, विनम्र और निरपेक्ष संत थे। बड़े-बड़े महापुरुष उनके पास सत्संगहेतु आते थे। एक बार वे खाक चौक, वृन्दावनमें पधारे। कथा चल रही थी, सो जूते-चप्पलोंके पास चुप-चाप बैठकर कथा सुनते रहे। कहते थे—कभी भीड़की परवाह मत करना। एक बार अस्वस्थ हुए तो ग्वालियरके बड़े अस्पतालमें इलाजहेतु लाये गये। वहीं सत्संग होने लगा। एक डॉक्टरने कहा—महाराजजी, हमें ऑपरेशनमें किसी मरीजके सीनेमें आजतक परमात्मा नहीं दीखा। महाराजजी बोले, हम तो मरीज हैं। तुम कहते हो हमारे रक्तमें कीटाणु बढ़ गये हैं। हमें तो नहीं दीखते। डॉक्टरने कहा कि सूक्ष्मदर्शी यन्त्रसे दीखेंगे, ऐसे नहीं। महाराजजी बोल उठे—फिर जो अणोरणीयान् परमात्मा है, वह बिना राम-वीक्षण यन्त्रके कैसे दीखेगा? कुछ कालके पश्चात् वह डॉक्टर सहयोगियोंसे कहता था कि अब मरीजमें मुझे भगवान् दीखने लगे।—**प्रेम**

परंतु प्रचलित मान्यतामें अवतार उनके उन्हीं स्वरूपोंको कहते हैं, जिनमें समय-समयपर वे विशेष रूपोंमें प्रकट हुए हैं। उनके कुछ अवतार तो किसी परिस्थितिविशेषमें किसी तात्कालिक उद्देश्यकी पूर्तिहेतु हुए हैं; जैसे वाराह, नृसिंह, कच्छप, वामन आदि; और कुछ अवतार जैसे—राम, कृष्ण दीर्घकालिक हुए, जिसमें उन्होंने दुष्टोंका संहार किया, भक्तों, धर्मात्मा लोगोंकी रक्षा की और धर्मकी पुनर्स्थापना की।

अतः अवतारवादके विवादमें न पड़कर सरल भावसे उनके किसी अवतारीरूपको स्वीकार करके आत्मीय सम्बन्ध जो भी पसन्द हो, जोड़कर उनके सान्निध्य और अन्तरंगताका अनुभव करें। उसमें कोई घाटा नहीं है, फायदा-ही-फायदा है।

यह सब मिलकर जमीनमें पहुँचनेके बाद पौधोंके लिये पोषक तत्त्व उपलब्ध कराते हैं। अतः इस पद्धतिसे गोबर एवं गोमूत्रके घटक पौधोंतक पहुँचते हैं। इस पद्धतिद्वारा उत्पादित की गयी खेतीकी फसल मनुष्य (शरीर)–के पोषणके लिये सर्वोत्तम है।

साथ ही खेतीमें इसका उपयोग करनेसे हमें भूगर्भसे प्राप्त होनेवाला जल भी विषरहित प्राप्त होगा। अतः इस पद्धतिका प्रयोग जीवित सृष्टिकी सम्पूर्ण सुरक्षाके लिये अत्यावश्यक है।

## साधनोपयोगी पत्र

(१)

### श्रीराधा-कृष्ण एक ही तत्त्व हैं

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र मिला। उत्तरमें निवेदन है कि श्रीराधा तथा श्रीकृष्ण वस्तुतः एक ही तत्त्वके दो नाम-रूप हैं। इनका नित्य अभिन्न सम्बन्ध है। अतः इनके विवाह होने, न होनेका प्रश्न ही नहीं उठता। विवाह तो लौकिक जीवोंमें होता है। तथापि ब्रह्मवैवर्तपुराणमें इनके विवाहकी बात भी आती है। इनकी लीला नित्य है और नित्य ही ये अपने ही एक तत्त्वके दो स्वरूपोंमें लीला-विहार करते रहते हैं।

समस्त दिव्य धामोंमें प्रमुख सच्चित्-परमानन्दमय गोलोकधाम है, वही समस्त ब्रह्माण्डका आत्मा है। उसीमें अनन्त ब्रह्माण्ड नित्य अनुप्राणित होते रहते हैं। वह नित्य सच्चिदानन्दमय परधाम सबसे विलक्षण और सर्वोपरि होनेपर भी सर्वत्र व्याप्त और सबमें स्थित है। इतनेपर भी उसकी पादविभूति—एक अंशमें ही समस्त प्राकृत लोकोंकी परिसमाप्ति हो जाती है। इनसे सर्वथा अस्पृष्ट जो त्रिपादविभूति है, वह अनैसर्गिक अप्राकृत सच्चिदानन्दमय परमधाम है। वही साकेत, वैकुण्ठ, कैलास आदिके रूपमें भक्तोंके अनुभवमें आता है। उस परमोज्ज्वल, परम मधुर, परम कल्याणमय, परम सुन्दर, सर्वातिशायी नित्य गोलोकधाममें ही वृन्दावन, मथुरा, गोकुल, नन्दग्राम, बरसाना, गिरिराज तथा विरजा और यमुना आदि दिव्य शाश्वत प्रदेश हैं। हमारा यह मर्त्यधाम पार्थिव है, ठोस है, यहाँ एकमें दूसरा नहीं रह सकता। जहाँ काशी है, वहाँ प्रयाग नहीं है—दोनों पृथक्-पृथक् हैं, परंतु दिव्य सच्चित्-परमानन्दमय धाम इस प्रकारका जड़ तथा ठोस नहीं है, वह कैसा है—इसे वाणीसे नहीं समझा जा सकता। परंतु इतना जान लेना चाहिये कि भगवान्की भाँति ही वह सर्वशक्तिसम्पन्न, सर्वाधार, दिव्य, प्रकाशमय, तेजोमय, नित्य सत्य भावमय है। उसीमें समस्त दिव्य लोकोंका सत्य स्फुरण है। वे साकेत, वैकुण्ठ, कैलास

एक ही हैं। उसी परतम गोलोकधामकी अधीश्वरी श्रीराधारानी हैं, जो श्रीकृष्णसे नित्य अभिन्न होनेपर भी श्रीकृष्णको नित्य परमानन्द प्रदान करनेवाली उनकी ह्लादिनी शक्ति हैं श्रीकृष्णके स्वरूपका आधार वे हैं और श्रीकृष्ण उनके स्वरूपके आधार हैं। वे नित्य प्रिया-प्रियतम हैं। कभी एक क्षणके लिये भी उनका वियोग नहीं होता। पर यह प्रिया-प्रियतमभाव कैसा है—इसे समझनेके लिये कोई भी लौकिक दृष्टान्त समीचीन और उपयुक्त नहीं है, जैसे भगवान् सर्वविलक्षण निरुपाधि और अतुलनीय तथा अचिन्त्य हैं, वैसे ही यह प्रिया-प्रियतमभाव भी अतुलनीय और अचिन्त्य है।

इस प्राकृत जगत्में जो इन सबका अवतरण हुआ था, कहा गया है कि वह इनके दिव्य राज्यमें इनकी एक स्वप्नलीला थी। विचित्र लीलासम्पादिनी भगवान्की योगमाया सदा लीलावैचित्र्य आयोजनमें ही लगी रहती है। प्रिया-प्रियतम निकुंजमें शयन कर रहे हैं। इसी समय प्रिया श्रीराधारानीके सामने योगमाया एक दृश्य उपस्थित करती हैं। श्रीजीको स्वप्न होता है—‘मैं भारतमें श्रीवृषभानुपुरीमें कीर्तिदा माताके अंकमें बालिका-रूपसे प्रकट हुई हूँ, इत्यादि।’ स्वप्न मनका संकल्प है। श्रीजी सदा सत्य-संकल्प हैं, अतः उनके उस संकल्पके अनुसार भारतवर्षके ब्रजमण्डलान्तर्गत वृषभानुपुरीमें उनके प्रादुर्भावकी लीला सम्पन्न होने लगी। इसी प्रकार योगमायाके संकेतसे श्रीकृष्णने भी संकल्पसे ही अवतरण किया। यहाँकी इस लीलामें श्रीकृष्ण ग्यारह वर्षकी आयुतक ही ब्रजमें विराजे। श्रीजीकी आयु भी लगभग इतनी-सी ही थी। कहते हैं कि वे श्रीकृष्णसे पन्द्रह दिन छोटी थीं। इसी बाल्यकालमें ब्रजमें इन दोनोंमें प्रथम दर्शन, पूर्वराग, संयोग आदिकी समस्त रसलीलाएँ सम्पन्न हुईं। लोकदृष्टिमें इनकी सगाईकी चर्चा चल रही थी। किसी-किसी भक्तने इनके विवाहका भी वर्णन किया है।

हमारे पास एक पुरानी हस्तलिखित पुस्तक है, जिसमें

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपने लिखा कि 'ध्यान नहीं लगता, अतएव मेरे लिये ध्यान लगानेकी चेष्टा करनी चाहिये', सो मैं चेष्टा करनेवाला कौन हूँ? भजन और सत्संग बहुत अधिक होनेसे ध्यान आप ही लग सकता है। मैं क्या चेष्टा करूँ? इसमें तो आपकी चेष्टा ही विशेष काम कर सकती है। जहाँ सत्संग होता हो, वहाँ चाहे जैसे भी कामको छोड़कर जाना चाहिये और ध्यानकी बातें सुनकर उसी समय उसी तरह ध्यान लगानेकी चेष्टा करनी चाहिये। ध्यानवाले पुरुषोंके समीप बैठकर ध्यान लगाना चाहिये, ध्यानमें जो विघ्न हो सो उन भगवान्के भक्तोंको कहना चाहिये। फिर उनके बतलाये अनुसार साधनकी चेष्टा करनी चाहिये। यों करनेसे ध्यान लग सकता है।

## व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदादिनमें १०।३४ बजेतक	शनि	रोहिणी सायं ५।३२ बजेतक	२४ नवम्बर	मिथुनराशि रात्रिशेष ५।१ बजेतक।
द्वितीया " ८।५९ बजेतक	रवि	मृगशिरा " ४।३० बजेतक	२५ "	भद्रा रात्रिमें ८।१ बजेसे।
तृतीया प्रातः ७।३ बजेतक	सोम	आर्द्रा दिनमें ३।११ बजेतक	२६ "	भद्रा प्रातः ७।३ बजेतक, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ८।१७ बजे।
पंचमी रात्रिमें २।३८ बजेतक	मंगल	पुनर्वसु " १।४१ बजेतक	२७ "	कर्कराशि दिनमें ८।४ बजेसे।
षष्ठी " १२।१६ बजेतक	बुध	पुष्य " १२।२ बजेतक	२८ "	भद्रा रात्रिमें १२।१६ बजेसे, मूल दिनमें १२।२ बजेसे।
सप्तमी " ९।५४ बजेतक	गुरु	आश्लेषा " १०।२० बजेतक	२९ "	भद्रा दिनमें ११।५ बजेतक, सिंहराशि दिनमें १०।२० बजेसे।
अष्टमी " ७।३८ बजेतक	शुक्र	मघा " ८।४३ बजेतक	३० "	मूल दिनमें ८।४३ बजेतक।
नवमी सायं ५।३१ बजेतक	शनि	पू०फा० प्रातः ७।१२ बजेतक	१ दिसम्बर	भद्रा रात्रिमें ४।३५ बजेसे, कन्याराशि दिनमें १२।५२ बजेसे।
दशमी दिनमें ३।४० बजेतक	रवि	हस्त रात्रिमें ४।५२ बजेतक	२ "	भद्रा दिनमें ३।४० बजेतक।
एकादशी " २।७ बजेतक	सोम	चित्रा " ४।१२ बजेतक	३ "	तुलाराशि सायं ४।३२ बजेसे, उत्पन्ना एकादशीव्रत (सबका), ज्येष्ठाका सूर्य सायं ४।३५ बजे।
द्वादशी " १२।५७ बजेतक	मंगल	स्वाती " ३।५५ बजेतक	४ "	भौम प्रदोषव्रत।
त्रयोदशी " १२।१५ बजेतक	बुध	विशाखा " ४।७ बजेतक	५ "	भद्रा दिनमें १२।१५ बजेसे रात्रिमें १२।८ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिमें १०।५ बजेसे।
चतुर्दशी " १२।१ बजेतक	गुरु	अनुराधा " ४।५० बजेतक	६ "	श्राद्धकी अमावस्या, मूल रात्रिमें ४।५० बजेसे।
अमावस्या " १२।१८ बजेतक	शुक्र	ज्येष्ठा रात्रिशेष ६।२ बजेतक	७ "	अमावस्या, धनुराशि रात्रिशेष ६।२ बजेसे।

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदादिनमें १।९ बजेतक	शनि	मूल अहोरात्र	८ दिसम्बर	× × ×
द्वितीया " २।२७ बजेतक	रवि	मूल प्रातः ७।४२ बजेतक	९ "	मूल प्रातः ७।४२ बजेतक।
तृतीया सांय ४।१० बजेतक	सोम	पू० षा० दिनमें ९।४८ बजेतक	१० "	भद्रा रात्रिशेष ५।१० बजेसे,मकरराशि सायं ४।२४ बजेसे।
चतुर्थी रात्रिमें ६।११ बजेतक	मंगल	उ०षा० " १२।१२ बजेतक	११ "	भद्रा रात्रिमें ६।११ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।
पंचमी " ८।२१ बजेतक	बुध	श्रवण " २।४७ बजेतक	१२ "	कुम्भराशि रात्रिमें ४।५ बजेसे, पंचकारम्भ रात्रिमें ४।५ बजे, श्रीरामविवाह।
षष्ठी " १०।२९ बजेतक	गुरु	धनिष्ठ सायं ५।२३ बजेतक	१३ "	श्रीस्कन्दषष्ठी।
सप्तमी " १२।२६ बजेतक	शुक्र	शतभिषा रात्रिमें ७।४९ बजेतक	१४ "	भद्रा रात्रिमें १२।२६ बजेसे।
अष्टमी " २।४ बजेतक	शनि	पू०भा० " ९।५८ बजेतक	१५ "	भद्रा दिनमें १।१५ बजेतक, मीनराशि दिनमें ३।२६ बजेसे।
नवमी " ३।१४ बजेतक	रवि	उ०भा० " ११।४३ बजेतक	१६ "	महानन्दानवमी, धनु-संक्रान्ति रात्रिमें ६।२५ बजे, मूल रात्रिमें ११।४३ बजेसे।
दशमी " ३।५८ बजेतक	सोम	रेवती " १।२ बजेतक	१७ "	मेषराशि रात्रिमें १।२ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें १।२ बजे।
एकादशी " ४।९ बजेतक	मंगल	अश्वनी " १।५० बजेतक	१८ "	भद्रा सायं ४।३ बजेसे रात्रिमें ४।९ बजेतक, मोक्षदा एकादशीव्रत (सबका), श्रीगीता-जयन्ती, मूल रात्रिमें १।५० बजेतक।
द्वादशी " ३।४९ बजेतक	बुध	भरणी " २।८ बजेतक	१९ "	× × ×
त्रयोदशी " २।५९ बजेतक	गुरु	कृत्तिका " १।५७ बजेतक	२० "	वृषराशि दिनमें ८।५ बजेसे, प्रदोषव्रत।
चतुर्दशी " १।४५ बजेतक	शुक्र	रोहिणी " १।२० बजेतक	२१ "	भद्रा रात्रिमें १।४५ बजेसे।
पूर्णिमा " १२।८ बजेतक		मृगशिरा " १२।२५ बजेतक	२२ "	भद्रा दिनमें १२।५६बजेतक, मिथुनराशि दिनमें १२।५३ बजेसे, पूर्णिमा, सायन मकरका सूर्य दिनमें १।२३ बजे।



## व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८-१९, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, पौष कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदारत्रिमें १०।१३ बजेतक	रवि	आर्द्रा रात्रिमें ११।९ बजेतक	२३ दिसम्बर	× × ×
द्वितीया " ८।४ बजेतक	सोम	पुनर्वसु " ९।४१ बजेतक	२४ "	कर्कराशि सायं ४।३ बजेसे।
तृतीया सायं ५।४७ बजेतक	मंगल	पुष्य " ८।५ बजेतक	२५ "	भद्रा प्रातः ६।५५ बजेसे सायं ५।४७ बजेतक, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ८।११ बजे, मूल रात्रिमें ८।५ बजेसे।
चतुर्थी दिनमें ३।२५ बजेतक	बुध	आश्लेषा " ६।२४ बजेतक	२६ "	सिंहराशि रात्रिमें ६।२४ बजेसे।
पंचमी " १।४ बजेतक	गुरु	मघा सायं ४।४६ बजेतक	२७ "	मूल सायं ४।४६ बजेतक।
षष्ठी " १०।४९ बजेतक	शुक्र	पूर्वाषाढा दिनमें ३।१३ बजेतक	२८ "	भद्रा दिनमें १०।४९ बजेसे रात्रिमें ९।४७ बजेतक, कन्याराशि रात्रिमें ८।५३ बजेसे।
सप्तमी " ८।४४ बजेतक	शनि	उ०फा० " १।५१ बजेतक	२९ "	पूर्वाषा० का सूर्य रात्रिमें ७।२३ बजे।
अष्टमी प्रातः ६।५४ बजेतक	रवि	हस्त " १२।४६ बजेतक	३० "	तुलाराशि रात्रिमें १२।२४ बजेसे।
दशमी रात्रिमें ४।१७ बजेतक	सोम	चित्रा " १२।१ बजेतक	३१ "	भद्रा सायं ४।५० बजेसे रात्रिमें ४।१७ बजेतक।
एकादशी " ३।३६ बजेतक	मंगल	स्वाती " ११।३९ बजेतक	१ जनवरी	वृश्चिकराशि रात्रिशेष ५।४३ बजेसे, सफला एकादशीव्रत ( सबका ), सन् २०१९ प्रारम्भ।
द्वादशी " ३।२३ बजेतक	बुध	विशाखा " ११।४४ बजेतक	२ "	× × ×
त्रयोदशी " ३।४४ बजेतक	गुरु	अनुराधा " १२।१९ बजेतक	३ "	भद्रा रात्रिमें ३।४४ बजेसे, प्रदोषव्रत, मूल दिनमें १२।१९ बजेसे।
चतुर्दशी " ४।३८ बजेतक	शुक्र	ज्येष्ठा " १।२४ बजेतक	४ "	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे।
अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक	शनि	मूल " २।५८ बजेतक	५ "	अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक।

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१९, सूर्य दक्षिणायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा अहोरात्र	रवि	पूर्वाषाढा सायं ४।५९ बजेतक	६ जनवरी	मकरराशि रात्रिमें ११।३४ बजेसे।
प्रतिपदा प्रातः ७।४२ बजेतक	सोम	उ०षा० रात्रिमें ७।१९ बजेतक	७ "	× × ×
द्वितीया दिनमें ९।४३ बजेतक	मंगल	श्रवण " ९।५३ बजेतक	८ "	× × ×
तृतीया " ११।५४ बजेतक	बुध	धनिष्ठा " १२।३० बजेतक	९ "	भद्रा रात्रिमें १२।५८ बजेसे,कुम्भराशि दिनमें ११।१२ बजेसे, पंचकार्कम्भ दिनमें ११।१२ बजे।
चतुर्थी " २।३ बजेतक	गुरु	शतभिषा " ३।० बजेतक	१० "	भद्रा दिनमें २।३ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।
पंचमी " ३।५७ बजेतक	शुक्र	पूर्वाषाढा रात्रिशेष ५।१४ बजेतक	११ "	मीनराशि रात्रिमें १०।४० बजेसे, उ०षा०का सूर्य रात्रिमें ८।० बजे।
षष्ठी सायं ५।३४ बजेतक	शनि	उ०षा० अहोरात्र	१२ "	× × ×
सप्तमी रात्रिमें ६।४२ बजेतक	रवि	उ०षा० प्रातः ७।६ बजेतक	१३ "	भद्रा रात्रिमें ६।४२ बजेसे, मूल प्रातः ७।६ बजेसे।
अष्टमी " ७।२२ बजेतक	सोम	रेवती दिनमें ८।३१ बजेतक	१४ "	भद्रा प्रातः ७।२ बजेतक, मेषराशि दिनमें ८।३१ बजेसे, पंचक समाप्त दिनमें ८।३१ बजे, मकरसंक्रान्ति रात्रिमें २।१३ बजे।
नवमी " ७।३० बजेतक	मंगल	अश्वनी " ९।२६ बजेतक	१५ "	खिचड़ी, खरमास समाप्त, उत्तरायण प्रारम्भ, शिशिर-ऋतु प्रारम्भ, मूल समाप्त दिनमें ९।२६ बजे।
दशमी " ७।८ बजेतक	बुध	भरणी " ९।५० बजेतक	१६ "	वृषराशि दिनमें ३।४८ बजेसे।
एकादशी " ६।१७ बजेतक	गुरु	कृत्तिका " ९।४५ बजेतक	१७ "	भद्रा प्रातः ६।४२ बजेसे रात्रिमें ६।१७ बजेतक; पुत्रदा एकादशीव्रत ( सबका )।
द्वादशी सायं ४।५९ बजेतक	शुक्र	रोहिणी " ९।१४ बजेतक	१८ "	मिथुनराशि रात्रिमें ८।४९ बजेसे, प्रदोषव्रत।
त्रयोदशी दिनमें ३।२१ बजेतक	शनि	मृगशिरा " ८।२३ बजेतक	१९ "	× × ×
चतुर्दशी " १।२४ बजेतक	रवि	आर्द्रा प्रातः ७।११ बजेतक	२० "	भद्रा दिनमें १।२४ बजेसे रात्रिमें १२।२० बजेतक, कर्कराशि रात्रिमें १२।६ बजेसे, व्रतपूर्णिमा, सायन कुम्भका सूर्य रात्रिमें ९।२ बजे।
पूर्णिमा " ११।१५ बजेतक	सोम	पुष्य रात्रिमें ४।१० बजेतक	२१ "	पूर्णिमा, मूल रात्रिमें ४।१० बजेसे, माघस्नानारम्भ, अभिजितका सूर्य दिनमें २।४६ बजे।



# पढ़ो, समझो और करो

(१)

## वाह री! अन्धी माता

समय ठीकसे याद नहीं है। यह घटना एक कश्मीरी पण्डितजीने अपने वार्तालापमें सुनायी। यहाँ उन्हींके शब्दोंमें उसे प्रस्तुत किया गया है।

प्यारा मुल्ला चौकपर एक अन्धीमाता और उसके दो पुत्र क्रमशः आठ और दस सालके रहते थे। पिताका साया सिरसे उठ गया था। माता अन्धी थी, बड़ी मुश्किलसे अपना एवं बच्चोंका भरण-पोषण करती थी। परंतु बचपनसे ही माताने अपने बच्चोंको ईमानदारीका पाठ पढ़ाया था। बच्चोंके दिलमें माँके द्वारा पढ़ाया पाठ अंकित था। दोनों बच्चे प्रातःकाल ही अपने छोटेसे व्यवसायके लिये निकल पड़ते थे। एक बच्चा सड़कके इस पार और दूसरा सड़कके उस पार खड़ा होकर चलते-फिरते लोगोंको दियासलाईकी डिब्बियाँ बेचा करते थे। एक दिनकी बात है। एक सज्जन अपने कार्यालय जा रहे थे। बच्चेने आग्रह किया—‘बाबूजी! दियासलाईकी डिब्बी लेते जाइये।’ उन सज्जनने कहा—‘नहीं! मुझे इनकी आवश्यकता नहीं है।’ बच्चेने पुनः आग्रह किया, ‘बाबूजी! घरमें काम आनेवाली चीज है, लेते जाइये। दो पैसेकी एक डिब्बी है।’

सज्जनने फिर कहा—‘मेरे पास फुटकर नहीं है।’ बच्चेने फिर कहा—‘बाबूजी! मैं फुटकर आपको ला दूँगा। उक्त सज्जनने देखा। उसकी आँखोंमें करुणा थी, आग्रह था, तो बाबूजीने कहा—‘अच्छा लाओ, छः डिब्बियाँ दे दो।’ बाबूने एक रुपया निकालकर दे दिया, बच्चा पटरी पारकर फुटकर लेने चला गया, जब फुटकर लेकर लौट रहा था तो तेज रफ्तारसे आ रहे एक ताँगेसे टकरा गया। सम्भवतः ताँगा उसके ऊपरसे निकल गया। भीड़ एकजुट हो गयी। उसका भाई भी आया, उसे देखते ही बच्चेने कहा—‘भाई! उसपार जो बाबू खड़े हैं, उनकी रकम लौटा दो,’। भाई दौड़कर गया और बाबूको देखकर कहने

लगा—‘क्या आपने ही मेरे भाईसे दियासलाईकी डिब्बियाँ ली थीं?’ बाबूने कहा—‘हाँ, मैंने ही ली थीं।’ तो लीजिये, आपकी बाकी रकम। लेकिन उसको क्या हुआ? उन सज्जनने पूछा। बालकने कहा—‘बाबूजी! वह ताँगेसे टकरा गया।’ सज्जन उसके पास गये। दोनोंको देखकर बच्चेने कहा—‘बाबूजी! आपकी रकम मिल गयी ना।’ बाबूने कहा—‘हाँ, बेटा! मिल गयी।’

गम्भीर घायल-अवस्थामें ही बच्चेने सदा-सदाके लिये आँखें बन्द कर लीं। चोट गहरी लगी थी। भाई बुक्का मारकर रो पड़ा। एक निःसहाय बच्चा जिसके पास रहने-खानेतकका ठिकाना नहीं, मृत्युशैय्यापर पड़ा हुआ भी नहीं भूला कि उसे किसीकी रकम लौटानी है।

हृदयका छेदन-भेदनकर देनेवाली चरित्रकी उच्चता और ईमानदारीकी ऐसी घटना भूतलपर मिलनी बहुत दुर्लभ है। साथ ही धन्य है वह अन्धी माँ, जिसने अपने पुत्रको इतने उच्च संस्कार दिये।—सत्य उदास

(२)

## तुलसीके औषधीय गुण

भारतीय संस्कृतिमें तुलसीको पूजनीय माना गया है। यहाँतक कि प्रतिदिन प्रातःपूजनके पश्चात् तुलसीके पौधेमें जल चढ़ाया जाता है। इन सब धार्मिक कृत्योंके अलावा तुलसीमें कई औषधीय गुण भी हैं, इसके सेवनसे कई प्रकारकी बीमारियोंसे बचा जा सकता है। प्राचीन ऋषि-मुनियोंने यह अनुभव किया है कि तुलसीके निरन्तर प्रयोगसे एक नहीं, सैकड़ों छोटे-मोटे रोगोंमें लाभ होता है। इसके पौधे जहाँ होते हैं, वहाँके आस-पासका वातावरण शुद्ध और स्वास्थ्यप्रद रहता है। तुलसीके प्रयोगसे ज्वर, जुकाम, खाँसी आदि अनेक बीमारियोंमें तो लाभ पहुँचता ही है, साथ ही मनुष्यके मनमें पवित्रता, शुद्धता और भक्ति भावनाएँ भी जाग्रत् होती हैं। यहाँ विभिन्न व्याधियोंमें तुलसी-सेवनके औषधीय लाभ दिये जा रहे हैं—

## ज्वर

१-जुकामके कारण आनेवाले ज्वरमें तुलसीके पत्रोंका रस निकालकर सेवन करना चाहिये।

२-मलेरिया बुखारके लिये तुलसी-पत्र तथा कालीमिर्चको पीसकर, गोलियाँ बनाकर तीन-तीन घंटेंमें दो-दो गोलियाँ लेनी चाहिये।

## खाँसी

१-खाँसीमें तुलसीके पत्तों और अडूसाके पत्तोंका रस बराबर मात्रामें मिलाकर सेवन करना चाहिये।

२-तुलसी-पत्रका रस तथा मुलहठीको मिलाकर शहदके साथ चाटनेसे खाँसी ठीक होती है।

## अन्य व्याधियाँ

१-कान-दर्दमें तुलसीका रस थोड़ा गर्म करके दो-चार बूँद कानमें टपकानेसे लाभ होता है।

२-बच्चोंका पेट फूलनेपर तुलसी-पत्रका स्वरस एक-दो चम्मच दिनमें २-३ बार पिलानेपर आराम मिलता है।

३-तुलसीके ताजे पत्तोंका रस एक तोला प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करनेसे अजीर्ण दूर होता है।

४-तुलसी तथा अदरकका रस एक-एक चम्मच मिलाकर दिनमें तीन बार पीनेसे पेटदर्दमें लाभ होता है।

५-तुलसीके पत्तोंको नींबूके रसमें पीसकर दादपर लगानेसे आराम मिलता है।

६-बवासीरमें तुलसीकी जड़ तथा नीमकी निम्बोलीकी मींगीको सम भाग पीसकर छाछके साथ सेवन करना लाभदायक है।

७-शरीरमें पित्ती उठ जानेपर तुलसीके बीजको पीसकर आँवलेके मुरब्बेके साथ लेना चाहिये।

८-कैंसरके लिये घरेलू उपायमें रोगीको १० ग्राम तुलसीका रस और १० ग्राम शहद मिलाकर सुबह-दोपहर-शामको देनेसे आराम मिलता है।

९-इसी प्रकार १० ग्राम तुलसीका रस एवं ५० ग्राम ताजा दही (खट्टा नहीं) देनेसे कैंसरमें राहत मिलती है। इसके साथ ही एक-एक घंटेके अन्तरसे दो तुलसीके पत्ते

भी मुँहमें रखकर चूसते रहना भी लाभदायक है। सुबह-दोपहर-शामको दही तथा तुलसीका रस लेनेपर कैंसरमें लाभ होता है। ऐसा नवीन शोधकर्ता बताते हैं।

१०-तुलसीके पाँच पत्ते तथा दो कालीमिर्च मिलाकर खानेसे वातरोगका नाश होता है।

उपर्युक्त विधिसे तुलसीका प्रयोगकर रोगोंसे छुटकारा पाया जा सकता है, यह सस्ती तथा सुलभ औषधि है, जिससे जन-साधारण घर बैठे-बैठे ही लाभ उठा सकते हैं।—इन्द्रलाल त्रिपाठी

(३)

## अन्तकालमें भगवत्-स्मरणकी महिमा

परम पिता परमात्माके दयापूर्ण विधानसे अन्तकालमें यदि किसी भी उपायसे भगवत्-स्मरण हो जाय तो जीव (प्राणी)-की निश्चय ही सद्गति होती है।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।

यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८।५)

घटना ९ अक्टूबर २०१७ राजस्थानके श्रीगंगानगरके आदर्श नगर, मकान न० ६३ की है।

बेलारामसेठी नामके एक ७० वर्षीय व्यक्ति जो व्यवसायसे वाहनोंमें परिचालक रह चुके थे, अपने संगी-साथियोंके संग-दोषके कारण मांस-मछली-अण्डे आदि खाने लगे थे। यद्यपि इनके घरमें इन चीजोंका प्रवेश नहीं था, परिवारमें अन्य सभी शाकाहारी थे।

शरीर-त्यागके लगभग एक वर्ष पहले वे दमा-रोगके कारण सख्त बीमार हुए और सघन चिकित्सासे ठीक हो गये। अब पुनः अन्तकाल उपस्थित हुआ। उनकी चार पुत्रियोंका सीमित परिवार था। उनका स्वास्थ्य क्रमशः बिगड़ रहा था। वे भयभीत होकर बोलने लगे—‘देखो, ये मेरेको पकड़कर ले जा रहे हैं। मुझे साँप दीख रहे हैं, ये मेरेको काँटे चुभो रहे हैं। मुझे भय लग रहा है।’

श्रीगंगानगरमें कई सज्जन परिवार सत्संग, भजन, कीर्तनमें लगे हुए हैं, उन्होंने वहाँ एक सेवा समिति

—सत्यनारायण सामरिया, सम्पर्क-०९४६०९९४८६०

## मनन करने योग्य

### आचरणभ्रष्टतासे पतन

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें कथा आती है, एक बार देवराज इन्द्र निर्जन वनमें, एक पुष्पोद्यानमें गये थे। वहाँ उन्हें रम्भा अप्सरा मिली। तदनन्तर वे दोनों जलविहार करने लगे। इसी बीच मुनिश्रेष्ठ दुर्वासा वैकुण्ठसे कैलास जाते हुए शिष्यमण्डलीसहित वहाँ आ पहुँचे। देवराज इन्द्रने उन्हें प्रणाम किया। मुनिने आशीर्वाद दिया। फिर भगवान् नारायणका दिया हुआ पारिजात-पुष्प इन्द्रको देकर मुनिने कहा—‘देवराज! भगवान् नारायणको निवेदित यह पुष्प सब विघ्नोंका नाश करनेवाला है। यह जिसके मस्तकपर रहेगा, वह सर्वत्र विजय प्राप्त करेगा और देवताओंमें अग्रगण्य होकर अग्रपूजाका अधिकारी होगा। महालक्ष्मी छायाकी तरह सदा उसके साथ रहेंगी। वह ज्ञान, तेज, बुद्धि, बल—सभी बातोंमें सब देवताओंसे श्रेष्ठ और भगवान् श्रीहरिके तुल्य पराक्रमी होगा, परंतु जो पामर अहंकारवश भगवान् श्रीहरिको निवेदित इस पुष्पको मस्तकपर धारण नहीं करेगा, वह अपनी जातिवालोंके सहित श्रीभ्रष्ट हो जायगा।’ इतना कहकर दुर्वासाजी शंकरालयको चले गये। इन्द्रने उस पुष्पको अपने सिरपर न धारण करके ऐरावत हाथीके मस्तकपर रख दिया। इससे इन्द्र श्रीभ्रष्ट हो गये। इन्द्रको श्रीभ्रष्ट देख रम्भा उन्हें छोड़कर स्वर्ग चली गयी। गजराज इन्द्रको नीचे गिराकर महान् अरण्यमें चला गया और हथिनीके साथ विहार करने लगा। इसी समय श्रीहरिने उस हाथीका मस्तक काटकर बालक (गणेश)–के सिरपर लगा दिया।

उधर रम्भाके संसर्गसे जिसकी बुद्धि अत्यन्त मन्द हो गयी थी, श्रीसे भ्रष्ट होनेके कारण जिसपर दीनता छायी हुई थी और जिसका आनन्द नष्ट हो गया था, वह इन्द्र गजेन्द्र और रम्भासे पराभूत होकर अमरावतीमें गया। वहाँ उसने देखा कि उस पुरीमें आनन्दका नामनिशान नहीं है।

खचाखच भर गयी है। तब दूतके मुखसे सारा वृत्तान्त सुनकर वह गुरु बृहस्पतिके घर गया और फिर गुरु तथा देवगणोंके साथ वह ब्रह्माकी सभामें जा पहुँचा। वहाँ जाकर देवताओंसहित इन्द्रने तथा बृहस्पतिने ब्रह्माको नमस्कार किया और भक्तिभावसे उनकी स्तुति की। तत्पश्चात् बृहस्पतिने प्रजापति ब्रह्मासे सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उसे सुनकर ब्रह्माने नीचे मुख करके कहना आरम्भ किया।

ब्रह्माजी बोले—देवेन्द्र! तुम मेरे प्रपौत्र हो और श्रीसम्पन्न होनेसे सदा प्रज्वलित होते रहते हो, किंतु राजन्! लक्ष्मीके समान सुन्दरी शचीके पति होनेपर भी तुम आचरणभ्रष्ट हो जाते हो। जो आचरणभ्रष्ट होता है, उसे लक्ष्मी अथवा यशकी प्राप्ति कहाँसे हो सकती है? वह पापी तो सदा सभी सभाओंमें निन्दाका विषय बना रहता है। रम्भाने तुम्हें हतबुद्धि बना दिया था। इसी कारण तुमने दुर्वासाद्वारा दिये गये श्रीहरिके नैवेद्यको गजराजके मस्तकपर डाल दिया। जिसके कारण तुम्हें लक्ष्मीसे रहित होना पड़ा, वह रम्भा भी तुम्हें क्षणभरमें ही त्यागकर चली गयी; क्योंकि वेश्या चंचला होती है। वह धनवानोंको ही पसन्द करती है, निर्धनोंको नहीं; परंतु वत्स! जो बीत गया, वह तो चला ही गया; क्योंकि बीता हुआ पुनः वापस नहीं आता। अब तुम लक्ष्मीकी प्राप्तिके लिये भक्तिपूर्वक नारायणका भजन करो।

इतना कहकर ब्रह्माजीने इन्द्रको जगत्स्रष्टा नारायणका स्तोत्र, कवच और मन्त्र दिया। तब इन्द्र देवताओं तथा गुरुके साथ पुष्करमें जाकर अपने अभीप्सित मन्त्रका जप करने लगे और कवच ग्रहण करके उसके द्वारा श्रीहरिकी स्तुतिमें तत्पर हो गये और उनकी कृपासे पुनः लक्ष्मी एवं राज्यकी प्राप्ति की।

इस प्रकार आचरणभ्रष्टतासे इन्द्रका भी पतन हो

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति । तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः । सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥ (गीता ६।३०-३१)

‘जो पुरुष सम्पूर्ण भूतोंमें सबके आत्मरूप मुझ वासुदेवको ही व्यापक देखता है और सम्पूर्ण भूतोंको मुझ वासुदेवके अन्तर्गत देखता है, उसके लिये मैं अदृश्य नहीं होता और वह मेरे लिये अदृश्य नहीं होता। जो पुरुष एकीभावमें स्थित होकर सम्पूर्ण भूतोंमें आत्मरूपसे स्थित मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेवको भजता है, वह योगी सब प्रकारसे बरतता हुआ भी मुझमें ही बरतता है।’

आजके इस अत्यन्त संकीर्ण स्वार्थपूर्ण जगत्में दूसरेके सुख-दुःखको अपना सुख-दुःख समझनेकी शिक्षा देनेके साथ-साथ कर्तव्य-कर्मपर आरुढ़ करानेवाला और कहीं भी आसक्ति-ममता न रखकर केवल भगवत्सेवाके लिये ही यज्ञमय जीवन-यापन करनेकी सत्-शिक्षा देनेवाला सार्वभौम ग्रन्थ ‘श्रीमद्भगवद्गीता’ ही है। इस ग्रन्थका विश्वमें जितना अधिक वास्तविक रूपमें प्रचार-प्रसार होगा, उतना ही मानव सच्चे सुख-शान्तिकी ओर बढ़ सकेगा।

मार्गशीर्ष शुक्ल ११ (एकादशी), मंगलवार, दिनाङ्क १८ दिसम्बर, २०१८ ई० को श्रीगीता-जयन्तीका महापर्व दिवस है। इस पर्वपर जनतामें गीता-प्रचारके साथ ही श्रीगीताके अध्ययन—गीताकी शिक्षाको जीवनमें उतारनेकी स्थायी योजना बननी चाहिये। आजके किंकर्तव्यविमूढ़ मोहग्रस्त मानवके लिये इसकी बड़ी आवश्यकता है। इस पर्वके उपलक्ष्यमें श्रीगीतामाता तथा गीतावक्ता भगवान् श्रीकृष्णका शुभाशीर्वाद प्राप्त करनेके लिये नीचे लिखे कार्य यथासाध्य और यथासम्भव देशभरमें सभी छोटे-बड़े स्थानोंमें अवश्य होने चाहिये—

(१) गीता-ग्रन्थ-पूजन। (२) गीताके वक्ता भगवान् श्रीकृष्ण तथा गीताको महाभारतमें ग्रथित करनेवाले भगवान् व्यासदेवका पूजन। (३) गीताका यथासाध्य व्यक्तिगत और सामूहिक पारायण। (४) गीता-तत्त्वको समझने-समझानेके हेतु गीता-प्रचारार्थ एवं समस्त विश्वको दिव्य ज्ञानचक्षु देकर सबको निष्कामभावसे कर्तव्य-परायण बनानेकी महती शिक्षाके लिये इस परम पुण्य दिवसका स्मृति-महोत्सव मनाना तथा उसके संदर्भमें सभाएँ, प्रवचन, व्याख्यान आदिका आयोजन एवं भगवन्नाम-संकीर्तन आदि करना-कराना। (५) महाविद्यालयों और विद्यालयोंमें गीता-पाठ, गीतापर व्याख्यान, गीता-परीक्षामें उत्तीर्ण छात्र-छात्राओंको पुरस्कार-वितरण आदि। (६) प्रत्येक मन्दिर, देवस्थान, धर्मस्थानमें गीता-कथा तथा अपने-अपने इष्ट भगवान्का विशेषरूपसे पूजन और आरती करना। (७) जहाँ किसी प्रकारकी अड़चन न हो, वहाँ श्रीगीताजीकी शोभायात्रा (जुलूस) निकालना। (८) सम्मान्य लेखक और कवि महोदयोंद्वारा गीता-सम्बन्धी लेखों और सुन्दर कविताओंके द्वारा गीता-प्रचार करने और करानेका संकल्प लेना, तदर्थ प्रेरणा देना और (९) देश, काल तथा पात्र (परिस्थिति)—के अनुसार गीता-सम्बन्धी अन्य कार्यक्रम अनुष्ठित होने चाहिये।

—सम्पादक

## गीता-दैनन्दिनी—गीता-प्रचारका एक साधन

(प्रकाशनका मुख्य उद्देश्य—नित्य गीता-पाठ एवं मनन करनेकी प्रेरणा देना।)

व्यापारिक संस्थान दीपावली/नववर्षमें इसे उपहारस्वरूप वितरित कर गीता-प्रसारमें सहयोग दे सकते हैं।

### गीता-दैनन्दिनी (सन् २०१९)-के सभी संस्करण अब उपलब्ध

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलर पृष्ठ आदि।

**पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)**—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद, मूल्य ₹ ८०

**बँगला (कोड 1489), ओड़िआ (कोड 1644), तेलुगु (कोड 1714)** प्रत्येकका मूल्य ₹ ८०

**पुस्तकाकार—सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)**—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹ ६५

**पॉकेट साइज—रंगीन सजिल्द आवरण (कोड 506)**—गीता-मूल श्लोक, मूल्य ₹ ३५





**COLLECTION OF VARIOUS**  
**-> HINDUISM SCRIPTURES**  
**-> HINDU COMICS**  
**-> AYURVEDA**  
**-> MAGZINES**

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

**Made with**  
  
**By**  
**Avinash/Shashi**

**Icreator of**  
**hinduism**  
**server!**



## ग्राहकोंसे आवश्यक निवेदन

जनवरी २०१९ का विशेषाङ्क 'राधामाधव-अङ्क'-जनवरीके प्रथम सप्ताहसे ही भेजनेका प्रयास है। **रजिस्ट्रीसे विशेषाङ्क प्राप्त करनेके लिये सदस्यता-शुल्क यथाशीघ्र भेजें।**

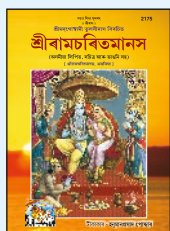
गीताप्रेसकी निजी दूकानोंपर भी सदस्यता-शुल्क छपी रसीद प्राप्त करके जमा कर सकते हैं। जिन ग्राहकोंका सदस्यता-शुल्क दिसम्बरतक प्राप्त नहीं होगा उन्हें वी०पी०पी०से विशेषाङ्क भेजा जायगा।

कल्याणके सदस्योंको मासिक अङ्क साधारण डाकसे भेजे जाते हैं। अङ्कोंके न मिलनेकी शिकायतें बहुत अधिक आने लगी हैं। सदस्योंको मासिक अङ्क भी निश्चित रूपसे उपलब्ध हो, इसके लिये सन् २०१९ के लिये **वार्षिक सदस्यता-शुल्क ₹ २५० के अतिरिक्त ₹ २०० देनेपर मासिक अङ्कोंको भी रजिस्टर्ड डाकसे भेजनेकी व्यवस्था की गयी है।** कल्याणके विषयमें जानकारीके लिये 09235400242 अथवा 09235400244 पर प्रत्येक कार्य-दिवसमें 9:30 बजेसे 12:30 बजेतक एवं 2:00 बजेसे 5:00 बजेतक सम्पर्क कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त 9648916010 पर SMS एवं WhatsApp की सुविधा भी उपलब्ध है।

**वार्षिक-शुल्क—₹२५०। पंचवर्षीय-शुल्क—₹१२५०**

इंटरनेटसे सदस्यता-शुल्क-भुगतानहेतु gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

## नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार



**श्रीरामचरितमानस-सटीक ( कोड नं० 2175 ) असमिया**—गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी द्वारा प्रणीत यह ग्रंथ पहली बार असमिया भाषामें प्रकाशित किया गया है। यह आदर्श गृहस्थ-जीवन, आदर्श पारिवारिक जीवन आदि मानव-धर्मके आदर्शोंका अनुपम आगार है। मूल्य ₹ २६०

**आदर्श कहानियाँ ( कोड 2171 ) असमिया**—इस पुस्तकमें ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराजके प्रवचनोंसे संकलित तत्त्वज्ञानकी प्रेरणास्रोत ३२ कहानियोंका सुन्दर संग्रह है। मूल्य ₹१५

**क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं? ( कोड 2170 ) असमिया**—इस पुस्तकमें सर्वसामान्यको कलियुगी गुरुओंके मायाजालसे सावधान करते हुए वास्तविक गुरुके रूपमें परमात्माका परिचय दिया गया है। मूल्य ₹१०

**शाकाहार या मांसाहार फैसला आपका स्वयं करें ( कोड 2167 ) असमिया**—मूल्य ₹१०

**गो-अङ्क ( कोड 2176 ) गुजराती**—इसमें गायकी महत्ता एवं उपयोगितापर उत्कृष्ट लेखोंके साथ-साथ गायके आर्थिक, वैज्ञानिक एवं धार्मिक महत्त्व तथा गोपालन एवं संरक्षणकी विधियोंका वर्णन किया गया है। मूल्य ₹२००

## कल्याण विशेषाङ्क—अभी उपलब्ध

[ संग्रह एवं वितरण करने योग्य ]

**सम्पूर्ण श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण**—केवल हिन्दी [ अठारह हजार श्लोकोंका श्लोकाङ्कसहित भाषानुवाद ] —देवीभागवतके कथा-पारायण एवं अनुष्ठानके परम्पराकी दृष्टिसे इसमें पाठविधि, सांगोपांग पूजन-अर्चन-हवनका विधान तथा नवाह्नपारायणके तिथिक्रमका भी उल्लेख किया गया है। प्रथम खण्डमें १ से ६ स्कन्ध ( कोड 1793 )—सजिल्द, मूल्य ₹१००, एवं द्वितीय खण्डमें ७ से १२ स्कन्ध ( कोड 1887 )—अजिल्द, मूल्य ₹७५, की कथाएँ दी गयी हैं। इसके साथ कोई मासिक अङ्क देय नहीं है।

**सेवा-अङ्क ( कोड 1875 )**—इसमें मुख्यरूपसे सेवाका स्वरूप, सेवाकी अवश्यकरणीयता, सेवा न करनेके दुष्परिणाम, सेवाके आयाम, सेवाके बाधक एवं साधक-तत्त्व, अनन्य सेवाके विभिन्न दृष्टान्त आदि अनेक विषयोंका समावेश है। मूल्य ₹१३०। इसके साथ कोई मासिक अङ्क देय नहीं है।

**नोट : दिसम्बर तक मँगवाने वालोंको [ रजिस्टर्ड पोस्टसे भेजनेका ] डाक खर्च मुफ्त।**